पहले कदम का उजाला

सीमा जैन 'भारत'

आलोकपर्व प्रकाशन

© सीमा जैन

प्रथम संस्करण : 2020

मूल्य : ₹ 150

प्रकाशक
आलोकपर्व प्रकाशन
1/6588, पूर्वी रोहतास नगर
शाहदरा, दिल्ली-110032
दूरभाष : 011-22328142
मो. 09818476063
E-mail : alokparvprakashan@gmail.com
Website : www.alokparvprakashan.com

टाइपसेटिंग
हर्षिता कम्प्यूटर्स

Pahale Kadam Ka Ujala
By Seema Jain

ISBN : 978-93-84597-00-0

यह पुस्तक
जीवन संघर्ष में उजाले को तलाशती हर नारी
को समर्पित

भूमिका

श्रीमती सीमा जैन ने अपनी कथाकृति 'लम्हों की गाथा' में अपने लेखकीय वक्तव्य में एक बहुत महत्वपूर्ण बात कही है। उसमें उन्होंने उपन्यास, कहानी एवं लघुकथा को क्रमशः 'खुला आकाश, मेरा आकाश, मेरी खिड़की से आकाश' के रूप में अभिहित किया है।

इसलिए वह अपनी इस औपन्यासिक कृति में खुले आकाश की विशालता-विराटता अर्थात समाज की विविधता-विपुलता और उसकी अनेक संगत-असंगत स्थितियों को समेटे वातावरण को बिम्बित करती दिख पड़ती हैं।

वह अपनी इस कृति में उसे कितना बाँध पाईं हैं, इसकी चर्चा संभवतः यहाँ बहुत समीचीन नहीं होगी। पर हाँ, इतना तो कहा ही जा सकता है कि कृति के सृजन क्षणों में उनके सामने हमारे चारों ओर फैला जागतिक आकाश अपने किसी-न-किसी रूप में अवश्य उपस्थित हुआ होगा अन्यथा उसका अक्स 'पहले कदम का उजाला' कैसे उतर पाता?

'पहले कदम का उजाला' के केंद्र में कथा की नायिका सरोज अवश्य है। किंतु वह स्पष्टतः माध्यम भर है। उसके बहाने इस कथाकृति में घर-परिवार, समाज में अपमान, उपेक्षा और उत्पीड़न से जूझती अन्य अनेक जिंदगियों के घुटन व संत्रास का भी परोक्ष आख्यायन हुआ है।

किंतु उपन्यास की कथा यहीं, इसी मुकाम पर नहीं ठहर जाती है। वह इससे आगे नारी को संघर्षपथ पर सधैर्य आगे बढ़ती तथा उन्मेष की शीर्ष मंजिल पर पहुँचती प्रस्तुत करती है। वहाँ वह उत्पीड़िता स्वयं को सर्वसम्मानित एवं सुदीप्त व्यक्तित्व के रूप में स्थापित और प्रतिष्ठित करती है।

इस उपन्यास का कथाशिल्प कथ्य को सतत प्रवाहमान बनाये रखता है। कथा की नायिका अपने भावविह्वल क्षणों को अनेक कविताओं के रूप में जीती है। उनसे गुजरते हुए पाठक वर्ग उसकी जीवनभूतियो को सहजता-सरसता से ग्रहण कर सकेगा।

उपन्यास की नायिका का लद्दाख प्रवास उसे नये रंग-रूपों से भरता प्रतीत होता है। वहाँ उसका मानसिक क्षितिज और अधिक विस्तार एवं व्यापकता प्राप्त करता है।

उस पावन प्रान्तर में वह अधिक आंनद एवं नवीन जीवनानुभवों के प्रकाश में

निखरते हुए पूर्वापेक्षा कहीं अधिक उदारमना, सहिष्णु और प्रेममय होने लगती है। उसकी इस अंतः विकास यात्रा में उसके साथ-साथ चलना भी एक विशिष्ट अनुभव है।

'पहले कदम का उजाला' लेखिका की द्वितीय कृति तथा प्रथम उपन्यास है। साहित्य की वृहद दुनिया में उसकी क्या नियति होगी इस सम्बन्ध में किसी के लिए भी कुछ भी कह पाना आसान नहीं होगा। परन्तु इस कृति के कलेवर में अनगिनत सूक्तियोंनुमा वाक्य पाठक को अनुरंजित एवं समृद्ध तो अवश्य करेंगे।

किंतु सीमाजी की यह कृति 'स्त्री-विमर्श' के संदर्भ में रचित ढेरों कथा कृतियों के मध्य किसी-न-किसी रूप में अपना वैशिष्ट्य तो प्रकट कर ही सकती है। क्योंकि उनकी यह कृति स्त्री देह की पैरोकारी में स्वयं की सलंग्न नहीं करती।

वह तो घर परिवार के अंधेरे में मायूस दम तोड़ती नारियों के लिए एक दीपक जलाने का श्लाघ्य उपक्रम करती दिख पड़ती है। हमारे अपने समय में सम्भवतः यही अत्यधिक अभीष्ट है। आशा है सुधी पाठक लेखिका के इस योग को अवश्य रेखांकित करेंगे।

अनेकानेक शुभकामनाओं सहित,

—***जगदीश तोमर***
ग्वालियर

मेरी बात

रामायण और महाभारत के काल से शुरू करें तो हमारे पास अमर, सम्रद्ध साहित्य है। हमारा जीवन कहीं न कहीं इन्हीं दोनों महाकाव्यों से जुड़ा है। यूँ कहें कि जीवन में इन दोनों से अलग कोई कथा हो सकती है क्या?

इन दोनों ग्रन्थों ने जीवन के हर रंग को समेटा है। शायद ही जीवन की कोई मिठास या कड़वाहट हो जो इनमें समाने से छूट गई हो।

'पहले कदम का उजाला' एक नारी की अपने आपको ऊपर उठाने की दास्तां है। जीवन में आगे बढ़ने के लिए पहला कदम उठाने के लिए उजाले अपने अंदर ही जगाने पड़ते हैं।

उसके लिए बाहर कोई उजाला नहीं मिल सकता है। या यूँ कहें कि बाहर के अंधेरों से लड़ने के लिए पहला उजाला भीतर ही लाना पड़ता है।

वक्त जीवन के कईं रंगों को दिखाता है। सीता हो या गांधारी सबने जीवन में अनन्त उतार चढ़ाव देखे। वक्त ने सबको अपनी आँच पर तपाया है। वक्त निर्विकार भाव से सिर्फ हमारे मन की शक्ति को देखता है।

एक इंसान अपने जीवन काल में एक महाभारत ही जी लेता है। इससे अछूते तो गीता का ज्ञान देने वाले कृष्ण भी नहीं रह पाए!

जीवन ने किसे क्या दिया, यह ज्यादा महत्वपूर्ण नहीं है। हमनें जीवन को उसके अंधेरों-उजालों के साथ कैसे जिया यह महत्व रखता है। यहीं से हम परिभाषित होते हैं।

वीरता याद रहती है। जो युद्ध के परिणाम से भी ज्यादा महत्व रखती है। जीत से ज्यादा जरूरी युद्ध की तैयारी है। परिणाम से जीवन नहीं जुड़ा है, जीवन कर्म से जुड़ा है।

'पहले कदम का उजाला' एक ऐसे ही संघर्ष की यात्रा है। एक बेटी की, बहू के अपमान की, एक पत्नी के सूनेपन की, एक कमजोर नारी की और एक ऐसी माँ की जो अपनी बेटी को वो सब देना चाहती है जो एक बच्चे की जरूरत है।

इसी वक्त की आँच पर तपकर वो नारी एक सफल इंसान बन सकी। एक शानदार माँ ने अपनी बेटी को जीवन का वो मन्त्र दिया जो आज हम सबकी जरूरत है।

कोई भी ख्वाब देखने वाला छोटा-बड़ा नहीं होता है। एकलव्य को किसने क्या

सिखाया था? उस माँ के पास साधन सीमित थे, योग्यता के दायरे भी छोटे थे। लगन सच्ची हो, इरादे मजबूत हों तो लघु कब विशाल बन जाये, कोई नहीं जानता।

जिनके इरादे स्पष्ट, सुदृढ़ हों, वक्त उनको सफलता का हर पाठ पढ़ा ही देता है। उनका हाथ पकड़कर उन्हें उस मुकाम तक ले जाता है जहाँ कर्म की लौ जगमगा उठती है।

बहुत कम सुविधाओं के साथ भी अपनी बेटी का मन अपने प्यार से भर दिया। उसके पास सब कुछ कम ही था। उसकी शिक्षा, अनुभव, रास्ते भी तंग ही थे। उसने उन रास्तों में से भी जीने की धारा बना ली। जो एक नदी का रूप ले पाई।

ये उपन्यास एक सन्देश है! जीवन की पूर्णता, सफलता हमारे इरादों में ही छुपी होती है। जिनके पैर नहीं, वो पर्वत पर चढ़ जाते हैं। जिनकी आँखें नहीं, वो ज्ञान के सागर में डूब सकते हैं।

हमारी सफलता की यात्रा हमारी योग्यता, साधन, संपन्नता की मोहताज नहीं होती है। वो तो सिर्फ इरादों की भूखी होती है।

जितने इरादे मजबूत होते हैं, साधना जितनी सघन होती है, गिरते-उठते, हम सब सीख ही जाते हैं। अपनी मंजिल पा ही लेते हैं।

पहले कदम का साहस, यदि मेरी पुस्तक आपको दे पाए तो ये कलम की सार्थकता होगी। आपकी प्रतिक्रिया का इंतजार रहेगा...

साथ ही आलोकपर्व प्रकाशन का व श्री रामगोपाल शर्मा जी का धन्यवाद जिन्होंने मेरे पहले उपन्यास को प्रकाशित करने में मेरा सहयोग दिया।

सफलता की सीढ़ियों पर पहुँच चुके लेखकों को तो हर प्रकाशक प्रकाशित करना पसंद करता है। पर दूसरी पुस्तक व पहले उपन्यास को प्रोत्साहन देना आसान नहीं!

मेरे आगे की लेखन यात्रा में मुझे उनका प्रोत्साहन मिलता रहे व आलोकपर्व प्रकाशन के लिए शुभकामनाओं के साथ...!

–सीमा जैन 'भारत'

(1)

सब कुछ इतना अचानक होगा, सोचा भी नहीं था! पता नहीं मुझे क्या हो गया कि मंच पर जाकर मेरे मुंह से वो शब्द अपने आप निकल गये जो मैं हमेशा सोचती थी। मैं दूसरों से कहती थी। जब भी कोई मुझसे कहता कि 'तुम सफल हो, क्योंकि तुम्हारा परिवार तुम्हारे साथ है!'

एक बहुत बड़ा कार्यक्रम जिसे पूरा देश देख रहा हो, ऐसे मंच पर पुरस्कार की कल्पना तो बहुत लोग करते होंगे पर हकीकत में उसका सच होना आसान नहीं है। जीत के लिए क्या चाहिए? मेरी नजर में हुनर, होंसला उससे भी बड़ी होती है लगन! पहला कदम! जिसने उसे उठाया है सफलता ने उसे सम्हाला है।

जीवन में पहला कदम आगे बढ़ाने की हिम्मत अपने अंदर ही जगानी पड़ती है। प्रेरणा के नाम पर यहाँ बहुत कुछ है। पर उजाले तो अपने भीतर जबतक प्रस्फुटित न हो, कुछ नहीं हो सकता। आगे के रास्ते में संघर्ष के दिये की लौ को बहुत इम्तिहान देने पड़ते हैं। पर उस लौ का आलोक अपना आकार ले ही लेता है।

आज इस विशाल मंच पर खड़े होकर लगा, ये लम्हा हर कलाकार अपने जीवन में देखना चाहता है। जिसने इसे देख लिया उसका जीवन, उसकी साधना धन्य हो गई।

वक्त से बड़ा बाजीगर कोई नहीं! यह प्यार, नफरत, सहयोग, अपमान सब कुछ दिखाता है। उसके इन्हीं सबक में जीवन की सफलता छिपी होती है। हमें आकार देने में सुख से ज्यादा बड़ा हाथ दुख का होता है। जिसने इसे समझ लिया जीवन उसके लिए एक प्रसाद है।

जिन्होंने सागर पार किये हैं, जिन्होंने पर्वतों को भी जीत लिया है, उनका प्रकृति से मुकाबला होता है। वहाँ की विपरीत परिस्तिथियों को जीतना उनका लक्ष्य होता है।

मेरे जैसे कमजोर लोग घर से बाहर निकलने के लिए जो सहते हैं वो किसी तूफान या ज्वारभाटे से कम नहीं होता है। एक कम पढ़ी-लिखी औरत का खुद को स्थापित करना सात समंदर पार करने जैसा, हिमालय पर चढ़ जाने जितना ही मुश्किल होता है।

पहली बार इतने बड़े स्तर पर मुझे पुरस्कार मिल रहा था। पिछले कई महीनों से चल रही कुकिंग कॉम्पिटिशन के हर लेवल को पार करके आज मुझे ये मकाम हासिल हुआ। ये वही सरोज है जिसे उसके घर में सास और पति ने कभी स्वाद के पहले लेवल पर भी पास नहीं किया था।

जो रास्ता वो शादी के सोलह सालों के बाद भी अपने घर में पार नहीं कर पाई, वो आज उसने यहाँ पूरा कर लिया। स्वाद के, सजावट के, हुनर के हर स्तर को जीतकर आज मैं यहाँ तक पहुंच पाई थी।

औरत तभी सफल हो पाती है जब उसका परिवार उसको सहयोग देता है। हम में से अधिकतर लोगों की सोच यही होती है। जब मेरी कुकिंग क्लासेज में लोग मुझे कहते थे कि 'आप इसलिए सफल हो क्योंकि आपका परिवार आपको सहयोग देता है।'

मैं हमेशा सबको एक ही जवाब देती थी कि 'यह कतई जरूरी नहीं कि हमारी सफलता का कारण हमारे परिवार का सहयोग ही हो! कभी दुख, मजबूरी, जरूरत ये सब भी इंसान को घर से बाहर निकलने पर मजबूर कर सकते है। वही उसकी सफलता का कारण भी बनते है।

उसे काम करना पड़ता है। पैसे के लिए, अपने आत्मसम्मान के लिए, एक बहुत बड़ा संघर्ष, एक बहुत बड़ी लड़ाई लड़नी पड़ती है। अपनी जगह बनाने के लिए!'

मेरी कक्षाओं में आने वाली, मुझसे पार्टियों का खाना बनवाने वाली कई महिलाएँ या कुछ लड़कियों को मैंने कुछ करने के लिए तड़फता पाया।

वो सब किसी सहमति, स्वीकृति के बिना बाहर निकलने की हिम्मत नहीं जुटा पाती थीं। सहमति कोई नहीं देता वो तो खुद ही अपने आपसे लेनी होती है। रास्तों पर चलना आसान होता है। पहला कदम बाहर निकालना मुश्किल होता है।

जो इन रास्तों पर चलने लगते हैं, वो जानते हैं यहाँ हर कदम पर वक्त हमारी बाँहें थामे हमारे साथ ही चलता है। वो हमारे हर पल का साक्षी होता है।

हां, यह बात अलग है कि जैसे-जैसे सफलता मिलती है, वैसे-वैसे विरोधी ताकतें कमजोर होने लगती हैं। वह जो कल तक ताने मारते थे, बुरा कहते थे, नीचे गिराने की कोई कसर नहीं छोड़ते थे, वो सब धीरे-धीरे साथ आने लगते हैं या यह

कहें कि बुरा कहना बंद कर देते हैं।

आज जब मैं मंच पर सम्मान लेने को खड़ी हुई तो जो बोलने के लिए सोचा था वो घर से रटकर गई थी। इतनी तैयारी की थी कि सोचा इससे अच्छा भाषण कोई क्या देगा?

मैं वह सब बोलना तो भूल गई और वह बोल पड़ी जो सालों से अपने मिलने वाली से कहती थी। जो अपनी कुकिंग क्लास में लोगों को समझाना चाहती थी। आज 'किचन क्वीन' का खिताब तो जीत लिया मगर उस सफलता के पीछे की बात मेरे मन से अपने आप बाहर आ गई।

सच में ये वही हुआ जो मैं चाहती थी। यही तो मैं कहना चाहती थी। सफलता के मंच पर जब सब खड़े होते हैं तो पूरी दुनिया एक ही बात कहती हैं—हर रिश्ते को धन्यवाद देती है, आखिरी में किस्मत को, ईश्वर को, अधिकतर ऐसा ही कुछ होता है।

मगर मैंने जो किया वह शायद कुछ अलग था। जब हम सफलता का हाथ थामे खड़े होते हैं तो अपने काले वक्त को कोई याद नहीं करता। उजाले में खड़े होकर अंधेरे की बात करना कौन पसंद करता है?

यह कौन कहना चाहता है कि मैं अंधेरों से निकलकर आई हूँ! या मैं जिस कैद में बंद थी वहाँ से भी आजादी के कुछ रास्ते निकलते थे या मैंने निकाल लिये और मैं आज यहाँ पहुँच पाई। ये सब आसान नहीं था, मगर इसके बाद जो हुआ वो मेरा सपना था!

सफलता मिलने के सब के रास्ते अलग-अलग होते हैं! मेरी सफलता का रास्ता था, मेरे घर का दुःख, मेरे पति और सास के द्वारा किया गया मेरा अपमान—मुझे खाना बनाना नहीं आता, मैं घर का कोई काम ठीक से नहीं कर सकती। साथ ही पैसों की जरूरत!

मेरे हाथ में अपनी कमाई रखनेवाला पति मुझे नहीं मिला था। पर दवा, या फीस के पैसे भी न मिल पायेंगे, ऐसा भी नहीं सोचा था। जरूरी जरूरतों के कारण शुरू हुआ ये रास्ता आज इस मंजिल पर आकर पूरा हुआ।

मैं किसी से ठीक से रिश्ते नहीं बना सकती। मैं हर किसी से झगड़ा करती हूँ, कोई मुझसे बात करना पसंद नहीं करता है!

जब भी पति के द्वारा किये गए अपमान का विरोध करती तो मुझे यही सब सुनने को मिलता था! उनका एक ही मतलब था कि वो जो अपमान करते हैं उसे चुपचाप सुनकर स्वीकार किया जाये। विरोध पर वो तो अपना बचाव ऐसे ही करेंगे। और इन सब बुराईयों में सबसे सच्ची बुराई यही थी कि मैं गरीब परिवार से थी।

यह सब बहुत सारी औरतें सुनती हैं! मगर कोई बताती नहीं! हम सब की एक ही परेशानी है कि हम यह सोचते हैं कि जो हमें बुरा कहता है वो वैसा ही माहौल बना देता है और फिर दुनिया भी हमें उसी नजर से देखने लगती है। हम दुनिया को ये कैसे कह सकते हैं कि हम बुरे नहीं हैं!

इसलिए हम दर्द को, अपने ऊपर किए गए जुल्म को छुपाते हैं। हमारे अपने भी हमको डांट देते हैं! ‘‘ऐसा तो सबके साथ होता है। मेरे साथ भी हुआ पर मैंने तो किसी को नहीं बताया।’’

हमें तो मायके से एक ही सीख के साथ विदा किया गया था ‘हमें कोई शिकायत नहीं चाहिए!’ और यही सब सहते-सहते सालों बीत जाने के बाद यदि कोई सफल हो भी जाती है तो कौन है जो अपना पिछला रोना, रोना चाहेगा? आज हम सफल, हमारा परिवार खुश और हम भी खुश.! सबसे बड़ा संदेश जो इस सफलता में छुपा था वो वहीं दम तोड़ देता है। जो कभी बाहर नहीं आ पाता है। जिन्हें सहयोग नहीं मिलता है जो अपमानित होते हैं। वो घुटकर मर जाते हैं! एक आशा की किरण ये भी हो सकती है, कोई जान नहीं पाता है।

इस प्रशंसा को लेकर मैं घर जा सकती थी। मगर मेरा संदेश उजालों में गुम हो जाता! आज अंधेरों को याद करना जरूरी था। हजारों तकलीफों के बावजूद हम वह सब कर सकते हैं जो हम करना चाहते हैं।

उन अंधेरों में उजाले का पहला कदम मैंने कैसे उठाया, यह याद करना व सबको बताना जरूरी था। पर जो हुआ वो बहुत अचानक हो गया। मेरा मन मुझसे पूछे बिना ही वो कर गया जो मैं चाहती थी। उसकी हिम्मत है या नहीं ये तो मुझे भी पता नहीं था।

हो सकता है हममें हुनर कम हो, आगे बढ़ाने की समझ कमजोर हो! फिर भी वक्त का हाथ थामे, आशा की लौ का हाथ थामे हम सब सफल हो सकते हैं! हमें सफलता के लिए सिर्फ एक ही चीज चाहिए। वह है इच्छाशक्ति!

मैंने मंच पर अपनी बात पूरी की और जिस खुशी का अहसास मेरे मन में बहने लगा वो अद्‌भुत था। पूरा हॉल तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज उठा। रोशनी से जगमगाता मंच आज इतना उजला लगा जैसे सारे आसमान के सितारे मेरे सर पर चमक उठे हों। जैसे ही मेरी नजर सामने की सीट पर गई जो अब खाली थी। मेरे पति! वहाँ से उठ चुके थे।

जिंदगी की असलियत

माइक से पीछे की तरफ मुड़ी तो पति खड़े दिख गए। कमल, एक बहुत गुस्से वाला इंसान जो अपनी पत्नी से कभी प्रेम से बात कर ही नहीं पाया। जिसे मुझसे बात करते ही गुस्सा आने लगता है। ये भी नसीब ही है कि पति-पत्नी के ग्रह कैसे मिलते हैं? हमारे ग्रह कभी शांति ला ही नहीं सके। एक बार सासू माँ ने बहू की कमी क्या निकाली वो दिन इस श्रवण कुमार के लिये काफी था।

उस दिन से आजतक मैं इनके लायक बन ही नहीं पाई। आज जो शब्द मेरे मुँह से निकले हैं उनका लावा पति के चेहरे पर साफ दिख रहा है। उस आग से मुझे तो डर नहीं लगा पर प्रायोजकों के चेहरों पर एक आश्चर्य मिश्रित डर था। वो सब लोग अपनी साँस रोके मेरे पति और मुझे देख रहे थे।

अब क्या होगा? ये सवाल सबकी आँखों में था। उन्होंने कुछ भी नहीं कहा बस उनकी आँखों ने इतना ही कहा कि 'जो करना था कर चुकी, अब घर चल!'

मंच पर पति का अपमान या कहें सच्चाई, कौन सुनना पसंद करेगा? पति को घर पर उनके खिलाफ बोलना आसान नहीं तो फिर जो आज हुआ वो तो असम्भव ही था। ये तो वो रिश्ता है जो बड़े हक से औरत का अपमान कर सकता है। औरत भी उसे सहती है। वो भी इसे उसका नसीब ही मानती है।

अब मुझे ये आँखें डरा नहीं पायेंगी। मेरे मन की शांति को अब कोई भी डिगा नहीं सकता है! राष्ट्रीय स्तर पर प्रतियोगिता जीतना वाकई अनुपम था! बहुत सारी प्रायोजक कम्पनियों की तरफ से मंच पर उपहारों का ढेर लगा था।

जिस कंपनी ने ये प्रतियोगिता आयोजित की थी उसके प्रतिनिधियों से मेरा एक रिश्ता-सा बन गया था। वो सब आँखों में सवाल लिये, डरे हुए खड़े थे। एक ने आगे बढ़ने की हिम्मत की और मेरे हाथ में लद्दाख की सात दिन की यात्रा के दो टिकिट रखते हुए कहा—''सरोज जी, ये आप दोनों के यात्रा के टिकिट!''

मैं कुछ कहती, उसके पहले पति बोले—''अब इसकी जरूरत नहीं है मैडम! हमारे तो चारों धाम एक मिनिट में ही पूरे हो गये! अब ये यात्रा आप ही कर

लीजिए!''

''ये टिकिट मुझे दे दो!'' कहते हुए मैंने अपना हाथ आगे बढ़ा दिया।''

''मैडम ये उपहार?''

—''बाद में देख लेंगे!'' इस समय इन उपहारों का वजन उठा पाना मुश्किल होगा! पति के सर पर सींग निकल आये हैं। उन्हें अभी लाल कपड़ा दिखाना, रुकना या कुछ कहना ठीक नहीं होगा। कहकर मैं तेज कदमों से उनके पीछे निकल गई।

—''ये टिकिट भी किस काम के?'' आगे चलते हुए पति गुस्से से बोले

अब यहाँ से चुपचाप बाहर निकलना ही ठीक है। मेरा एक शब्द जो काम करेगा वो दुनिया को दिखाना जरूरी नहीं। जितना और जो कहना था वो मैं कह चुकी थी।

उस सभागृह से बाहर निकलते समय ऐसा लगा जैसे कई आँखे हमें घूर रहीं हैं। उन सबको नजरअंदाज करते हुए हम जल्दी से लोकल ट्रेन की तरफ आगे बढ़ रहे थे।

पति मुझसे दो कदम आगे चल रहे थे। उनके गुस्से को उन्होंने कैसे दबाकर रखा है ये उनकी चाल बता रही थी। आयोजकों की ओर से जिस कार का इंतजाम किया गया था। उसे ठुकराकर आगे बढ़ते हुए उन्होंने कहा—''नहीं चाहिए इनका अहसान, लोकल से घर चलेगें!''

लोकल ट्रेन में रोज की तरह बहुत भीड़ थी। रात का समय काम से लौटने वालों के कारण स्टेशन और बोगी का हाल तो अब कीड़े-मकोड़ों को भी मात देता है। इस धक्का-मुक्की में एक नौजवान बैसाखियों के सहारे बोगी में आया।

भीड़ इतनी थी कि लोग उसे भी धक्के मार रहे थे। वो किसी तरह खुद को सम्हाले हुए खड़ा था। मैं अपनी जगह से उठी और उसकी तरफ देखते हुए बोला—''आप मेरी जगह बैठ जाइये!''

उस नवयुवक ने शुक्रिया अदा किया और वो मेरी जगह बैठ गया। लोगों की समझ तो देखो, जब मैं उठी तो मेरी जगह एक लड़की बैठने को आगे बढ़ी।

मैंने उससे कहा—''मैंने उनके लिए सीट छोड़ी है।" लड़की ने बुरा-सा मुँह बनाते हुए कहा—''ये इस डिब्बे में आये ही क्यों? इनका तो अलग...'' उस लड़की ने चिढ़ते हुए कहा।

वो लड़की भी क्या करती, उसका गुस्सा वाजिब था। अधिकतर यही होता आया

है कि खूबसूरत लड़की को सीट दी जाती है, जरूरतमंद को अधिकतर नजरअंदाज किया जाता है।

—"वो बहुत दूर था। उतनी दूर चलकर जाता तो ट्रेन छूट जाती और फिर वहाँ जगह मिल जाती, ये जरूरी नहीं!" उस नवयुवक ने जवाब दिया।

—"अरे नहीं, आप परेशान न हों! हम खड़े रह सकते हैं!" मेरी बात सुनकर उस लड़की की आँखों में गुस्सा बढ़ गया। पति के बिगड़े हुलिए पर ध्यान देने का मन नहीं था।

आज के पहले मेरी हमेशा कोशिश रहती थी कि कम-से-कम पति घर के बाहर प्रेम से पेश आये। अपने बिखरे जीवन को जितना सम्हाल सकती थी, सम्हाल ही लेती थी। पर अभी वो डर नहीं रहा, उसकी जगह 'जो सही है वही करना है!' ने ले ली।

हमारा घर एक तीन कमरों वाला किराए का छोटा-सा घर। जिसमें एक ड्राइंगरूम, अंदर का कमरा वो हमारा बेडरूम भी है और आखिरी वाला छोटा-सा किचन है। बाहर का कमरा सासु माँ का कमरा भी है। जिसमें टी.वी. रखा है। जो लगभग पूरे दिन चलता रहता है।

कैसे, क्या प्रोग्राम आ रहे हैं इससे उन्हें कोई मतलब नहीं! रोली की पढ़ाई, बचपन में उसकी नींद खराब हो या कोई और परेशानी हो, टीवी को अपने पूरे शोर के साथ ही चलना है।

ये माँ बेटे दोनों अपना पूरा खाली समय वहीं बिताते हैं। वहीं टीवी के सामने खाना खाना। जूठे बर्तन वहीं छोड़कर बिना हाथ धोए टी वी देखना इनकी आदतों में शामिल है।

इंसान जीवन में अपने आप को बेहतर बन सकता है मगर किसी और की आदतों में इंच भर भी यदि परिवर्तन कर सकता है तो वो एक चमत्कार ही होता है। जो इस घर में तो आज तक नहीं हो सका। जो जैसा था वैसा ही है।

मैं शादी के बाद से इनके जूठे बर्तन उठाती ही रही। चाहे मेरी तबियत खराब हो या कोई और कारण मेरी इन इन सेवाओं में कभी भी कोई परिवर्तन नहीं आया।

बीच का कमरा जो हमारा कमरा है। व्यवस्थित शब्द से मेरे पति का कोई मतलब नहीं है। वो सारे काम मेरी जिम्मेदारी का हिस्सा रहे हैं। हमारी शादी से पहले

यह घर कैसे चलता होगा? यह विचार कई बार मेरे मन में आया मगर इसका कभी कोई जवाब नहीं मिल सका।

रोली के जन्म के बाद मेरी परेशानियां बहुत बढ़ गई थीं। बाहर टीवी की आवाज से रोली की नींद खराब हो या वो रोती रहे मगर मैं बीच का दरवाजा बंद नहीं कर सकती थी। सासू माँ या पति को कभी भी कोई जरूरत हो, वाली बात तब भी अपना फन उठाये वैसे ही खड़ी थी।

रोली ने बचपन से लेकर आज तक की पढ़ाई किचन में ही की है। एक छोटा स्टूल जिस पर वो बैठ जाती है। दूसरा थोड़ा ऊँचा और बड़ा जिस पर एक बार में एक कॉपी, किताब ही रखी जा सकती है। बाकी का सामान जमीन पर रखा रहता है। बैग पर पति के पैर या पानी के छींटे हमने कई बार सहे हैं।

जब भी ध्यान से चलने की बात कही, इतना हंगामा हुआ कि वो सब मैंने बंद ही कर दिया। रोली भी समझ चुकी थी कि इस घर में बहस व सुधार की कोई जगह नहीं है। जीवन में हम सबको सफलता तो मिल जाती है पर उस सफलता से पहले हमने अपने आप को कितना भट्टी में तपाया है यह हम ही जानते हैं।

अपने ही ख्यालों में खोई मैं चल रही थी। हम चलते-चलते अपने घर के दरवाजे पर पहुँच गये। ट्रेन से घर तक का रास्ता हम दोनों ने कैसे तय किया वो हमारा दिल ही जानता है। घर पहुँचकर मैं पति के आगे हो गई। और मेरा ध्यान तब टूटा जब मेरी पीठ पर एक झन्नाटेदार झापड़ पड़ा! मैं गिरते-गिरते बची। सामने मेरी सास खड़ी थी। मेरे पति की प्राणवायु!

पीठ पर पड़ी मार से रीढ़ की हड्डी झनझना गई। मैंने अपनी पीठ पर हाथ रखा तबतक रोली दौड़कर मेरे पास आ गई। मेरी कंधों को अपनी दोनों बाहों से पकड़कर वो खड़ी हो गई। आगे कुछ भी हो सकता है। ये हम दोनों जानते हैं।

—"घर का नाम मिट्टी में मिला दिया! अब मिल गई तुझे शांति? पूरी दुनिया को बता दिया कि तू दुखियारी है! हमने तुझ पर बहुत जुल्म किये हैं!" सास की आंखों से आग निकल रही थी।

चुप रहना ही बेहतर है! अब मेरे बोलने से कुछ फर्क नहीं पड़ेगा। इन माँ-बेटे को जितना बोलना है, ये बोले बिना रुकनेवाले नहीं है।

—"खुद को महान साबित करने का मौका कैसे छोड़ सकती थी?" जैसी है वैसा

ही तो बोलेगी ना! खानदानी घर से होती तो ऐसी बात मुँह से भी नहीं निकलती।" पति ने अपना तेल डालकर आग भड़काने का काम शुरू किया।

ये औरत के खानदान को बुरा कहकर पति का परिवार किस तरह अपने को संतुष्ट करता है, समझ नहीं आता है। पर ये बहुत पुरानी, स्थायी आदत है जो इनको बहुत सुकून देती है।

—"उस कुर्सी पर बैठे-बैठे मैं अपनी बुराई सुन रहा था। ऐसा लग रहा था कि कोई मुझ पर गर्म तेल डाल रहा हो! इस औरत ने तो इज्जत की ऐसी धज्जियाँ उड़ाईं है कि इसे घर की, रोली की, किसी की भी परवाह नहीं रही।"

रोली टेलिविजन पर सब देख ही चुकी थी। उसको इंटर्नशिप के लिये कुछ जरूरी काम करने थे। इसलिए वो मेरे साथ नहीं आ पाई थी। अब इस घर में क्या होने वाला है इसका अंदाजा उस मासूम को था। इसीलिए वो बाहर के कमरे में बैठी हमारा इंतजार कर रही थी।

घर में उसने मुझे मार खाते हुए देख लिया था। अब वो मेरे पास खड़ी थी। अगले वार से बचाने के लिए। उसने बीच में टोकते हुए कहा—"माँ के सच से मेरा क्या बुरा हो सकता है?" रोली मुझसे सटकर खड़ी हो गई।

वो जानती थी, मुझे कभी भी पति फिर से मार सकते हैं। ऐसे न जाने कितनी बार, ये बच्ची हम दोनों के बीच में खड़ी रहकर मुझे बचाती आई है।

—"अरे वाह, तो अब तुझ पर भी अपनी माँ का रंग चढ़ गया है! तेरी माँ ने जो किया उससे सिर्फ मेरा और मेरी माँ का ही लेना-देना है! हम दोनों ही तो जालिम हैं!" पति की आँखों में गुस्सा बढ़ ही रहा था।

उसका इतनी जल्दी ठंडा होना आसान भी नहीं। आज जो हुआ है वो कितने दिन लेगा या कुछ नया ही रूप ले ले कोई नहीं कह सकता है।

रोली चुप सुन रही थी। उसे पता था इस अंतहीन बहस से कुछ मिलने वाला नहीं है। हाँ, जितना बोलेंगें उतनी ही शांति दूर होती जाएगी। जिन्दगी की जंग बोलने से ज्यादा, कुछ करके ही जीती जा सकती है। कर्म हर सवाल का जवाब है। बहस तो कभी नहीं!

—"माँ से अच्छे संस्कार मिलते तो ये कभी भी इतना मुँह नहीं खोल सकती थी।" दादी ने आग उगलते हुए कहा

जो भी मेरा पक्ष ले, वो बुरा हो जाएगा ये बहुत सीधी-सी चाल है इन माँ-बेटे की। माँ ने अपने बेटे 'कमल' का पक्ष लिया।

—"अरे माँ, आज तो ट्रेन में भी इसने एक और महान काम किया था। एक लड़के को बैठने को जगह दी थी इन मैडम ने!" पति की आंखें गुस्से से फैल रही थीं।

—"किसी कमजोर की सहायता करना कौन-सी गलती है?" मेरे मुँह से अपने आप शब्द निकल गए।

—"अब तू अपना मुँह बंद करेगी या फिर..." कहकर पति ने अपना हाथ मारने के लिए उठाया। रोली हम दोनों के बीच आकर खड़ी हो गई।

—"घर और बाहर तुम्हारे दो रूप हैं! घर में औरत का अपमान करते हो और बाहर एक अपाहिज की जगह एक लड़की के लिए तुम्हारे दिल में ज्यादा जगह है। जिस दिन मैंने अपना दूसरा रूप दिखा दिया ना..." पति के हाथ को पकड़कर मैंने ये सब बोल तो दिया पर रोली जो हमारे बीच में खड़ी थी, मुझे डर व आश्चर्य से देख रही थी। आज पहली बार मैंने पति को जवाब दिया था। साथ ही उसका हाथ रोक दिया था।

मैंने आँखों ही आँखों में पति को ये कह दिया कि आज उसने पीछे से जो मारा वो आखरी थप्पड़ था। सामने की मार को बचाने की हिम्मत अब मुझमें आ चुकी है।

अब ये कभी भी नहीं हो पायेगा। एक चेतावनी बहुत जरूरी थी। हमारे ऊपर जुल्म की अमरबेल तब ही पनपती है जब हम उसे अपने ऊपर फैलने देते हैं। जबतक उसको खींचकर खुद से अलग न करें वो फैलती रहती है। उसकी जिंदगी हमारी कायरता में ही बसी होती है।

ये फिलॉसफी तो सब जानते हैं। पर परजीवी को अपने से दूर कर देने की ताकत जब तक नहीं आती, इस बात का कोई अर्थ नहीं है।

सच ही कहा है जो जीवन में उतारा, आत्मसात किया आपने जीवन को उतना ही समझा है। बाकी सब किताबी ज्ञान है। जिसका कोई अर्थ नहीं है। किताबी ज्ञान तो हर तरफ फैला पड़ा है। उससे कुछ नहीं होता! जो ज्ञान जीवन को रूपांतरित कर दे, वही सच्चा ज्ञान है।

रोली की आँखों में डर था। उसने मेरे हाथ को पकड़कर बोला—''माँ, कमरे में चलो!''

—''अब ये महारानी आराम ही तो करेंगी! जो करना, कहना था वो तो सब कर चुकी है! किसे पता था इसके ऐसे पर निकल आयेंगे? इससे तो ये घर में ही अच्छी थी!'' सास की तकलीफ वाजिब थी।

बहू के साथ जो किया जाता है वो बन्द कमरे में ही खत्म हो जाता है। सिसकती, जलती बहू तो घर से बाहर तब ही जाती है जब ससुरालवालों की बर्दाश्त के बाहर हो जाती है।

बहुओं को पढ़ाने वाले, बेटी के समान प्रेम व सम्मान देने वाले घर आज बहुत हैं। ये सब जिसके नसीब में हैं, वो खुशकिस्मत हैं। वो मैं कभी न बन पाई।

ये शब्द मेरे कानों में तो पड़े पर तब तक रोली ने कमरा बन्द कर दिया। कमरे के बन्द होने से कुछ भी बंद नहीं होगा। ये तो एक शुरुआत हुई है एक आग की—जो पहली बार मेरी तरफ से लगायी गयी है।

कमरे में बहुत देर तक हम मां बेटी चुप बैठे रहे। कुछ समझ नहीं आ रहा था कि हम एक दूसरे से क्या कहें? वैसे भी जिनके दिलों में प्यार होता है उनके दिल इतने करीब होते हैं कि अगर बातें ना भी कीं जाए तब भी वो एक दूसरे को सुन सकते हैं।

झगड़ा करते वक्त दिल इतने दूर होते हैं कि चिल्लाकर अपनी बात कहनी पड़ती है। पर प्रेम के पल में दिल इतने पास होते हैं कि धड़कन को भी सुना जा सकता है। इस वक्त मेरे साथ पलंग पर लेटी रोली और मैं हाथ पकड़े एक दूसरे से बातें ही कर रहे थे।

बहुत देर बाद रोली बोली—''मां ये हाथ में क्या है?'' मेरे हाथ को देखकर मुझे याद आया कि अरे, मेरे हाथ में तो यह लद्दाख की टिकट है।

रोली ने बोला तो मैंने उसे दिखाते हुए कहा—''अरे यही तो एक टिकट है जो मैं वहाँ के उपहारों में से ले पाई। बाकी सारी चीजें तो वही छूट गईं। तू तो जानती है स्टेज पर बोलने के बाद तेरे पापा की आंखें जो कह रही थीं।

उससे मुझे डर तो नहीं लगा मगर इतना तो सोचा ही कि अब यहाँ से चुपचाप निकलना ही बेहतर है। स्टेज के पीछे एक नया सीन खड़ा करने की मेरी कोई इच्छा

नहीं थी। प्रायोजक ने टिकिट मेरे हाथ पर रखा और मैंने भी उसे अपनी मुट्ठी में दबाकर रख ही लिया था।"

रोली ने टिकट देखते हुए बोला—''तो क्या आप पापा के साथ घूमने जाओगी?'' उसकी आंखों में देखते हुए मैंने कहा—''सच कहूँ तो अकेले जाने का मन है! यही तो एक वो जगह है जहां मैं सालों से जाना चाहती थी। तुम मेरे साथ चलो तो बहुत अच्छा होगा। पर क्या ये अभी सम्भव है बेटा...? तेरे पापा के साथ जाकर भी क्या होगा?

अभी वह जिस हाल में है मुझे लगता नहीं कि चार दिन के अंदर उसका मन इतना बदल जाए कि वह मेरे साथ चलने को तैयार हो जाएं। और यदि वह चलें भी तो उनका व्यवहार तो बदलने से रहा! उसी जहर के साथ, इन्हीं सब बातों के साथ जो यहाँ दिन-रात घर में चलती हैं।

वहाँ भी यदि यही सब किया तो फिर वहाँ जाने की जरूरत ही क्या है? सच कहूँ रोली तो पहली बार बहुत इच्छा हो रही है कि या तो तेरे साथ, नहीं तो मैं अकेली जाँऊ! मुझे पता है कि इस समय तू मेरे साथ नहीं जा सकती है। तुझे तो अभी हैदराबाद जाना है। जिसे छोड़ना अभी तेरे लिए संभव नहीं है। क्या मैं सही सोच रही हूँ?''

—''बहुत सही सोच रही हो!'' रोली ने मेरा हाथ दबाते हुए कहा। ''तुम चार दिन अकेले सुकून से जीने का हक रखती हो! पिछले कई सालों में तुमने इस घर में अपनी कमाई से बहुत सहयोग दिया है। पापा ने कितना कमाया और कितना गँवाया, इसके बारे में तो कहना बेकार ही होगा। वैसे भी कहने से कौन-सा सुधार होने वाला है?

तुमने तो हमेशा अपनी जरूरत पर ही खर्च किया है। अपनी इच्छा का तो कभी सोचा भी नहीं! आज तुम इस उपहार में मिले टिकट का अपनी शांति और अपनी सुकून के लिए इस्तेमाल करोगी तो लगेगा तुमने अपने मन के लिए कुछ किया। तुम जरूर चली जाओ!

मगर याद रखना पापा और दादी के डर से घबराना नहीं! वो जो भी कहे उन्हें कहने दो! सबसे अच्छी बात तो यही है कि तुम चुप रहना! तुम्हारी जाने में तो अभी चार दिन बाकी हैं!''

घर का माहौल बच्चों को कितनी जल्दी परिपक्व बना देता है। ये रोली की बात से हमेशा लगा। रोली आज नहीं आज से कई साल पहले भी इतनी ही समझदार थी।

घर की परिस्थिति में इंसान दो रूपों में ढल सकता है, या तो वह बुरे माहौल में बिगड़ जाए। खुद को बर्बाद कर ले। किसी गलत रास्ते पर चला जाए और अपनी बुराइयों का दोष बड़े आराम से अपने घर के बिगड़े हुए माहौल को दे दे। अधिकतर लोग जिन्दगी में यही करते हैं।

दूसरी परिस्थिति होती है बुरे माहौल में खुद को संभाल लेना। ये वैसा ही है जैसे लाल बहादुर शास्त्री को माली ने कहा था–'यदि तुम्हारे पिता नहीं है तो तुम चोरी नहीं कर सकते! तुमको अपनी जिम्मेदारी खुद उठानी है।' ऐसा ही कुछ हाल मेरा और रोली का रहा।

जब बच्चा दिन रात घर में पिता और दादी के कड़वाहट से भरे माहौल को देखता है, तो या तो वह खुद भी कड़वा हो जाए या वह जीवन में एक सबक ले ले उसे कभी किसी के साथ कड़वा नहीं होना है।

वह कहते हैं ना जिन्होंने दुख भोगे हो वे कभी किसी को दुख दे नहीं सकते। सच यही है जिसने दुख का स्वाद चखा है वह जानता है कि दुख क्या है? जो खुद दर्द से गुजरा हो तो कभी किसी को दर्द दे नहीं सकता।

रोली की आंखों में देखते हुए मैंने कहा–"थोड़ा डर तो लगता है! पहली बार हवाई जहाज में बैठूंगी! पहली बार एयरपोर्ट के अंदर जाऊँगी! मुझे तो यह भी नहीं पता है कि अंदर क्या करना होगा?"

–"कोई ड़रने की बात नहीं है! घबराने की जरूरत नहीं है! बहुत सीधी-सी एक बात है कि यदि हम कुछ नहीं जानते हैं, तो हम किसी से सहायता ले सकते हैं! हर जगह सिक्योरिटी वाले लोग खड़े होते हैं। हमें सहायता की जरूरत है यह कहने से कोई न कोई समझा ही देगा।

जब तुम किसी से बात करोगी तो कोई न कोई तुम्हारी सहायता कर ही देगा! तुम आराम से पहुंच जाओगी और तुम्हें कोई दिक्कत नहीं होगी! तुम अपनी तैयारी कर लो वहाँ जाने के लिए तुम्हें गर्म कपड़ों की जरूरत होगी!"

हम मां बेटी बातें ही कर रहे थे कि पति अंदर आए और आते ही बोले–"यह

जो टिकट अपने हाथ में छुपा कर लाई थी इसे फाड़ कर फेंक देना! तेरे साथ लद्दाख जाना तो दूर मैं आज के बाद सड़क पर चलना भी पसंद नहीं करूंगा!"

मैंने बहुत शांति से जवाब दिया–"जैसा आपका मन! मैं अकेली ही चली जाऊंगी! पर मैं यह टिकट नहीं फाड़ सकती! यही तो एक जगह है। जहां मैं जाना चाहती थी। पहली बार ये मौका मिला है।"

–"बस चुप हो जा! अब तेरी महानता का गाना फिर से नहीं सुनना है! तूने कितना कमाया और कितना इस घर में लगाया! हम तो जैसे फालतू ही थे! तेरे कौन से अरमान मैंने पूरे नहीं किये?

तेरी कमाई से पहले तो यह घर ऐसे ही चल रहा था! तुझे खाना तो शायद तेरे घर वाले ही आकर खिला रहे थे!" कहते हुए पति ने सामने रखा पानी का गिलास उठाया और जमीन पर जोर से दे मारा।

वो कमरे से बाहर चले गए। उनके गुस्से का अंदाजा मुझे है। ये जो भी हो रहा है बहुत कम है। मैंने तो इससे भी छोटी बात पर बहुत बड़ा तूफान झेला है।

एक के बाद एक, झटके सहना उनके लिए वाकई आसान नहीं है! पहले स्टेज, उसके बाद बैसाखी और उसके बाद लद्दाख जाने की बात वो भी अकेले!

मुझे सिर्फ एक ही काम करना है! चुप रहना है! मुझे जो कहना था वह मैंने कह दिया। जिंदगी में जितनी भी लड़ाइयां लड़ी जाती है। वह हमेशा ठंडे दिमाग से लड़ी जाती है। अशांत मन से निशाना कभी नहीं लगता! हमारा निशाना उतना ही अचूक हो सकता है जितने हम शांत हैं, गहरे हैं और ठंडे हैं!

हालाँकि ये आसान नहीं है! कुछ भी करो कभी न कभी तो शब्द मुँह से निकल ही जाते हैं।

आज कुछ हासिल करने के बाद सबसे बड़ा सवाल एक ही है कि अब मैं खुद को क्या जवाब दूंगी? जिंदगी में हमें जवाब सिर्फ खुद को देना होता है!

हमने जिंदगी को कितना समझा और क्या किया? कोई हमारे साथ कुछ भी करे इससे कोई फर्क नहीं पड़ता है। सबसे बड़ी बात यह है कि हम खुद के साथ क्या करते हैं? क्या हम अपने साथ न्याय कर पाए? हमने अपने मन की सुनी?

हमने अपने आत्म सम्मान को बचाया? जरूरी नहीं है कि हम बहुत बड़े पद पर पहुंच जाएं और बहुत सारा पैसा कमाएं। तभी अपने आत्मसम्मान के बारे में

सोच पाएं।

छोटी सफलता के साथ जीकर भी अपने आप को खुश रखा जा सकता है। आज पहली बार मैंने जो कदम आगे बढ़ाया है अब उससे पीछे नहीं रखा जाएगा।

आज के बाद इनको एक बार शांति से ये समझा दूँगी कि अब आपकी बीमारी को सम्हालने की ताकत मुझमें नहीं है। मैं फर्ज पूरे कर दूँगी। स्वाभिमान की एक सीमा रेखा अब आपको भी समझनी होगी।

यदि पति और मेरी सास मेरी इच्छा के अनुरूप मुझे इस घर में रखते हैं तो मुझे कोई फर्क नहीं पड़ता। मैं इनके साथ भी जी लूंगी। चाहे जो भी हो रोली को पिता भी तो मिलेंगे।

नहीं तो मैं अकेली ही अपनी बेटी को पाल सकती हूँ। सबसे बड़ी खुशी की बात यह है कि मेरी रोली, मेरी हर सांस को समझती है। मुझे जीवन में उसे कभी समझाने की जरूरत नहीं पड़ेगी।

हमारा विश्वास हमारी चाल बदल देता है। या यूँ कहें कि हम रूपांतरित हो जाते हैं। जब हम बदलते हैं तो वह बात आसपास वाले भी समझने लगते हैं। हवा बहुत कुछ कह जाती है।

आज मुझे रोली के कहे कुछ शब्द याद आए। जब उसने मुझे कहा था कि 'तुम्हें मुझे कभी भी, कुछ भी कहने और साबित करने की जरूरत नहीं पड़ेगी! तुम जब जो, जैसा करोगी मैं हर दम हर हाल में तुम्हारे साथ हूँ।

कभी भी कुछ भी करते समय यह मत सोचना कि मैं क्या सोचूंगी या मुझे कैसा लगेगा? मैंने तुमको बहुत देखा है। तुम्हारी हर बात, तुम्हारी इस घर से जुड़ी ईमानदारी, मेहनत, तुम्हारा अपमान और तुम्हारी सफलता जो तुमने बहुत धीरे-धीरे पाई है, सब कुछ मैंने देखा, समझा है।

याद रखना मैं हमेशा तुम्हारे साथ हूँ!' और सचमुच आज रोली ने यह साबित भी कर दिया कि वो कितनी समझदार है!

—''माँ ये नाना-नानी का तीसरा फोन है। वो बहुत घबराये हुए हैं। तुमसे बात करना चाहते हैं!''

—''अभी मन नहीं है! कल बात करेंगे! वो तब घबरा रहे हैं जब जरूरत नहीं है! जिस दिन मैं डरकर उनके पास गई थी उस दिन वो नहीं घबराये थे। उल्टा मुझे

हिम्मत, हिदायत के साथ इन जानवरों के पास भेज दिया था। तब तुम मेरे पेट में थी।"

—''अब भूल जाओ उस सबको, अपने आपको परेशान मत करो!''

—''इसीलिए तो बात नहीं करनी है!'' कहते-कहते नजर धुँधली हो गई। यादें बहुत पीछे खींचकर ले गईं! जहाँ सबकुछ बहुत साफ दिखाई दे रहा है।

मेरी सास, उनका प्यारा बेटा कमल! मेरी सास के अच्छे नैन नक्श, सांवला रंग, चश्मा, छोटे बाल साथ ही उन्हें सजने संवरने का बहुत शौक था जो उनकी सास के रहते तो वह कभी पूरा ना कर पाई। अपनी सास के जाने के बाद वह शौक उन्होंने अपनी विवाहित बेटी को कपड़े, मेचिंग के चप्पल, बिंदी, रूमाल देकर पूरा किया और आज भी बड़ी शिद्दत से कर रही हैं।

अपनी बेटी के लिए साड़ियां खरीदना, छुप कर उसके लिए ब्लाउज सिलवाना मेचिंग का सामान लेकर आना और अपने बेटे के हाथ उसे बेटी तक पहुंचा देना। उनकी पूरी कोशिश रहती थी मुझे यह सब पता ना चले। मगर एक छोटे से घर में चीजों को छुपाना आसान भी तो कहां होता है?

मुझे कभी साड़ी तो कभी उसका तैयार पैकेट दिख ही जाता। उसे देखकर वो कहती ''इसको वहीं रहने दे! मैं अभी उठा लूँगी!''

उनके दो ही काम है टीवी देखना या फोन पर बातें करना। उनका फोन पर बात करने वाला तो वही हाल है जिसमें लोग रॉन्ग नंबर पर भी आधा घंटा बात कर सकते हैं। तो फिर राइट नंबर का तो खुदा ही मालिक है।

कब टीवी देखते देखते वह बाजार चली जाए कोई नहीं जानता? वो मुझे कभी कह कर नहीं जाती हैं। उनके कमरे में टीवी चलता ही रहता और वह बाहर के बाहर चप्पल पहनकर बाजार चली जाती। मैं पहले तो बाहर जाती तो बहुत आश्चर्य में रह जाती कि वो ऐसे खुला घर छोड़कर कहां चली गई?

मुझसे कह कर क्यों नहीं जाती हैं? जब वो आती और मैं उनसे कहती कि 'दरवाजे खुले पड़े थे। आप बता कर जाती तो मैं दरवाजा बंद कर लेती।' इस पर उनका जवाब मुझे निरुत्तरित कर जाता।वह कहती 'बताने की क्या जरूरत है? दस मिनट के लिये ही तो बाहर गई थी। दूर जाती तो बता देती।' वो दस मिनट की परिभाषा मुझे कभी समझ ही नहीं आयी।

बाहर का दरवाजा खुला। अंदर रोली सो रही है। मैं किचन में काम कर रही हूँ। मन में डर लगता कोई अंदर के कमरे तक आ जाए, रोली को उठा जाए तो? मगर इन सब की फिक्र कभी उन मां बेटे को नहीं हुई। एक दो बार मैंने अपने पति से भी कहा तो उन्होंने कहा 'पास में ही तो जाती है। हर बार तुम्हें बता कर जाना जरूरी है क्या?'

प्रेम शायद इसी को कहते हैं। जो वाकई अंधा होता है। वह कुछ भी सही गलत नहीं देखता। जो किसी को प्यार करता है उसे वो हमेशा सही लगता है। यहाँ भी बेटे को माँ व माँ को बेटा हमेशा सही ही लगते हैं।

एक दिन मेरे मुंह से निकल गया 'आप घर से बाहर गई उसके बाद घर में कोई घुस गया तो? उसे क्या पता कि आप कितनी दूर हैं?'

'कितनी लम्बी जुबान है? सरोज कितना मुंह चलाती है? इसे अपनी सास का लिहाज नहीं?' एक महीने तक इन माँ बेटे ने मुझसे बात नहीं कि थी। उसके बाद खुले दरवाजे को मैंने भगवान भरोसे ही छोड़ दिया।

कल घर में कुछ हो जाए यह सोचना भी छोड़ दिया था। हम जैसों के घरों में क्या है? और क्या मिलेगा? शायद चोर भी ये जानते थे। इन माँ और बेटी-बेटा ने एक दूसरे की हर आदत को इतनी मजबूती से पकड़े रखा था कि उसे बदलना नामुमकिन था।

इस घर की पल-पल की खबर बेटी को देना और उसके घर के हर बात में दखल देना यही इनका काम था। एक फोन घरों में कितनी आग लगा सकता है यह कोई इनकी बेटी के ससुराल वालों से पूछे।

जहां बहू ने घर का कोई फर्ज तो पूरा किया नहीं उल्टा अपने बीमार सास-ससुर को छोड़कर एक अलग मकान में रहने लगी। मेरी ननद की सास एक बार हमारे घर भी आई थी। उन्होंने मेरी सास से हाथ जोड़कर विनती की थी कि उनके घर में दखल ना दिया करें। वह अपने इकलौते बेटे को छोड़कर नहीं रह पाएंगे।

उनका बेटा भी अपनी मां को बहुत प्यार करता था। मगर मेरी ननद ने उनको धमकी दी कि यदि वो अलग नहीं हुए तो वो घर छोड़कर चली जाएगी। अपने बच्चे को बहुत प्यार करने वाले इस पिता ने अपनी पत्नी और बेटे को चुना। उसके माता-पिता ने अपने बेटे के घर को तोड़ना ठीक नहीं समझा।

अब वह सुबह और शाम दोनों समय अपने माता पिता से मिलने जाते हैं। मगर उनके माता-पिता कभी अपने बेटे के घर नहीं आ सकते क्योंकि उनकी बहू को अपने सास-ससुर पसंद नहीं हैं। वो उनके आने से डिस्टर्ब हो जाती है। बहू के कितने अलग-अलग रूप हो सकते हैं? इसी घर में देखकर पता चलता है! एक मैं, जो हर काम के बाद भी कभी अच्छी नहीं बन पाई। एक वो जिसने घर तोड़ दिया, माता-पिता का कभी कोई काम नहीं किया उसके बावजूद उसके पति उसके आगे कुछ कह नहीं पाते हैं।

यहाँ तक कि उसके सास-ससुर भी बहुत गिड़गिड़ाये थे। 'हमसे अलग मत जाओ! हम अपने बेटे को देखे बगैर नहीं जी पाएंगे!' मगर मगर बहू का दिल नहीं पसीजा। और बहू अपने घर से अलग हो गई।

इन मां बेटों के हिसाब से बीमार सास-ससुर की सेवा करना उनकी बेटी की जरूरत नहीं है। वह क्यों उनकी सेवा करे? वह सिर्फ अपना घर देखेगी! अपने पति और बच्चे को देखेगी! इससे ज्यादा उसकी कोई जिम्मेदारी नहीं है। अब यही हो रहा है, जैसा और जो मां समझाती है उसी ढंग से उनकी बेटी का घर चल रहा है।

मेरा बचपन

हम तीन भाई बहनों में बड़ा भाई दादा-दादी का लाडला था। जिसे दादी हमेशा गोदी में लिए घूमती थी। उसे बचपन में दादा-दादी से बहुत प्यार मिला। छोटे वाले को नानी के घर में छुटकू की तरह बहुत प्यार मिलता था।बचपन में जब मैं दोनों जगह जाती तो ऐसा लगता था, मैं अपनी जगह नहीं बना पा रही हूँ।

दादी के घर में दादा-दादी के साथ मुझे लगता था मुझे वह प्यार नहीं मिल रहा है जो मेरे बड़े भाई को मिलता है। साथ ही बुआ और चाची मुझसे बहुत काम करवाती थी। जो मुझे अच्छा नहीं लगता था। भाई तो आराम से खा रहा है। बातें कर रहा है। और बहन कभी बर्तन जमा रही है। तो कभी दौड़ दौड़ के पानी ला रही है। कभी सब को खाना खिला रही है।

मुझे काम का मना करने पर डाँट पड़ती थी। लड़की को तो काम आना ही चाहिये! जबकि मेरा भाई मुझसे एक साल ही छोटा था। मैं दादी के घर जाना पसंद नहीं करती थी। नानी के घर भी वही हाल था छोटे भाई को वहाँ बहुत लाड़ मिलता था। मुझसे काम तो बिल्कुल नहीं करवाया जाता था, मगर प्यार जैसा भी कुछ नहीं था.। बार-बार यदि यह सुना है कि मेरा छोटा भाई बहुत अच्छा है! बहुत प्यारा है! सब को अच्छा लगता है! परिवार के लोग जब यह बात बार-बार कहते हैं तो वह नहीं जानते कि इसका दूसरे बच्चे पर क्या असर पड़ रहा है?

उसका मन कहीं ना कहीं बहुत घायल होता है और टूटता भी है। जो किसी को दिखता नहीं है। यहाँ तक कि वह बच्चा कह भी नहीं पाता है कि उसे बहुत अपमानित-सा महसूस हो रहा है। क्या उसमें कोई भी खासियत नहीं है कि उसे भी प्यार किया जाए या महत्व दिया जाए?

इन दोनों घरों के अनुभव से मैंने बहुत जल्दी यह समझ लिया कि मुझे कहीं नहीं जाना है और अपने ही घर में रहना है। घर में किताबें पढ़ना और रंगीन पेंसिल से ड्राइंग बनाना वह मेरा शौक था। मेरा पूरा बचपन किताबों और रंगीन पेंसिल के साथ ही बीता। वहीं से मैंने अपना सुकून अपना प्यार अपनी शांति सब ढूंढ लिया

और वह मुझे अच्छा भी लगता था।

पिताजी का व्यवसाय था जिससे हमारे परिवार का घर खर्च ठीक-ठाक चलता था। पिताजी, जिनको अपने काम से ही मतलब था। अपने काम के प्रति वो बेहद अनुशासित थे। अपने कपड़े खुद धोना, पूजा के बर्तन साफ करना ये उनकी आदतें मुझे बहुत अच्छी लगती थीं।

अपने घर में हमेशा सबको अपना काम करते हुए मैंने देखा था। कोई मजबूरी हो तो अलग बात है मगर कभी किसी ने किसी के झूठे बर्तन नहीं उठाये।

माँ ने हमेशा उनके कहे समय के अनुसार उनके लिए नाश्ता या खाना हमेशा बना कर रखा। इसमें कभी कोई गलती भी नहीं हुई थी। मैंने उनको बहुत कम बहस करते या लड़ते देखा था। वो दोनों अपने अपने फर्ज बड़ी निष्ठा और शांति से पूरा करते थे।

पिताजी को इस बात से कुछ खास मतलब नहीं था कि कौन बच्चा कैसी पढ़ाई कर रहा है? उसके दोस्त कैसे हैं? उसे क्या चाहिए? किसके कपड़े नये बनेंगे या कौन पुरानी किताब से ही पढ़ाई करेगा? ये सारी चीजें हमेशा माँ ने ही तय कीं जिसमें पिताजी की सहमति शामिल होती थी।

बस उन्हें एक ही बात की जल्दी थी कि बड़ा भाई जल्दी से अपनी पढ़ाई पूरी करे और वो उसे अपने व्यवसाय में शामिल कर लें।

हमारे संस्कार में क्या कमी रह गई थी कि हम भाई बहन में जरा भी स्नेह नहीं था। या ये कहें कि मुझे अपने भाइयों का साथ अच्छा लगता था मगर उनकी अपनी दुनिया थी जिसमें उन्हें मेरी जरूरत नहीं थी। उनकी दुनिया उनके दोस्त, उनकी पढ़ाई के साथ खत्म हो जाती थी।

जो हाल शादी से पहले था वो तो शादी के बाद और भी बुरा हो गया। शादी के बाद भाइयों ने कभी पलटकर देखना और समझना नहीं चाहा कि उनकी बहन का हाल कैसा है?

रही बात माँ की तो वो एक बहुत धार्मिक महिला हैं। जो घर के काम के बाद अपना पूरा समय व्रत व पूजा को देना पसंद करती हैं। उनको किसी से उम्मीद या शिकायत कम ही होती है। उन्होंने ही मेरी शादी का निर्णय लगभग खुद ही ले लिया था।

छोटा परिवार हो तो जिम्मेदारी कम ही होती है। इससे ज्यादा की उम्मीद उन्होंने नहीं की थी। बाकी सब कुछ मुझे अपनी मेहनत से बनाना है ये उनका सोचना था।

दो भाइयों की एक बहन हूँ। बड़ा भाई दादा-दादी के पास पला,बड़ा हुआ। छोटा माँ की आँख का तारा! इन दोनों के बीच में मैं! घर हो या बाहर मेरा हर काम चुस्त-दुरुस्त होता था!

पढ़ाई से ज्यादा चित्रकारी, संगीत का शौक था। पर उसके लिए कोई भी पैसा और साथ देने को तैयार नहीं हुआ। पढ़ाई पूरी करो और समय से शादी हो जाये बस मेरे लिए इतना ही सोचा गया था।

एक लड़की को यदि इतने भेदभाव के साथ बड़ा करना है तो पैदा होते ही उसका गला घोंट देने में क्या बुराई है? मन को मारकर एक शरीर को बड़ा करके ये क्या करते हैं? लड़की माने दहेज! बस एक ही मतलब होता है शायद उसके लिए बाकी के सारे खर्चे काट दिए जाते हैं।

बेटी को बोझ समझने वाले अपनी आँखों पर डर, अज्ञान की ऐसी पट्टी बांधे रखते हैं कि उन्हें दुनिया की बेटियों की अद्‌भुत सफलता दिखती नहीं या आँख के साथ उनके कान भी बंद हो जाते हैं।

बेटी को साहस व साथ देने के लिए पैसे से ज्यादा नियत की जरूरत होती है। पैसा तो इरादों की ताकत में ही छुपा होता है। अपने निक्कमे लड़कों की एक क्लास पर चार साल पैसे लगाने वाले काश! अपनी बेटियों को हर साल एक बार फीस प्रेम व हिम्मत के साथ देते तो आज समाज की तस्वीर कुछ और ही होती।

उस समय मेरा साथ किसी ने नहीं दिया। घर में ही रहकर मैंने एम.ए. कर लिया था। कॉरेस्पॉन्डेंस कोर्स के लिए किसी ने मना नहीं किया। मेरा पढ़ने का शौक भी पूरा हो गया।

मेरे लिए एक रिश्ता आया। उन लोगों ने मुझे किसी समारोह में देखा था। उन्होंने रिश्ता भेजा। हमारी तरफ से तो वैसे भी कोई खास सोच नहीं थी। उनको लड़की पसन्द तो इस परिवार को भी लड़का पसन्द।

कमल, मेरे पति दिखने में बहुत अच्छे थे। बारहवीं के बाद पढ़ नहीं पाये। एक छोटी-सी दुकान है। बिजली का काम करते हैं। साथ में माँ व एक विवाहित बहन जो इसी शहर में है। पिता बहुत शराब पीते थे तो बीमारी के चलते कई साल पहले

चल बसे।

माँ ने ही इन बच्चों को बड़ा किया। बेटी की शादी की। इस छोटे से परिचय के साथ एक मध्यमवर्गीय परिवार में मेरी शादी हो गई। एक बेटा और माँ बस छोटा-सा परिवार! सुखी रहने के लिए काफी था। किसे पता था कि दुःख देने के लिए जिन्दगी को काला करने के लिए एक कोयला भी काफी होता है। मुझे तो दो मिले थे।

सास को कम दहेज वाली बहू पसंद नहीं आ पायी। मेरे रूप, गुण किसी को भी कोई मौका ही नहीं मिला। मैं सम्मान, प्रेम की हर परीक्षा में फेल हो गई। पति को माँ की बात में मीन-मेख निकालने कि आदत नहीं। जो माँ को पसंद नहीं वो उन्हें कैसे पसन्द आती?

रही सही कसर ननद पूरी कर देती थी। वो कभी नहीं चाहती थी कि हम सास-बहू में प्रेम पनपे।

जब पहली बार चाय बनाई थी तो माँ ने अपने लाड़ले कमल से पूछा था—"कैसी चाय बनी है बेटा?"

—"बहुत अच्छी है माँ!"

—"क्या, ये चाय तुझे अच्छी लगी? तो मैं जो आजतक तुझे बनाकर देती थी वो क्या गर्म पानी था?"

—"अरे सुनो, माँ को ये चाय पसंद नहीं, दूसरी बनाकर लाओ!" कहते हुए उस प्यारे, लाडले कमल ने अपना कप भी मेरे हाथ पर गुस्से से रख दिया था।

वो दिन एक आज्ञाकारी बेटे के लिए काफी था। अपनी माँ का इशारा समझने के लिए।

पाजामे में नील ठीक नहीं लगी है तो साड़ी में कलफ कम है। कोई भी काम कभी ठीक हो ही नहीं पाया। जो उन माँ बेटे को खुश रख पाता। मैं भी हमेशा सोचती कभी तो इनको खुश रख पाऊँगी! ये वो सपना था जो कभी भी पूरा न हो सका!

उसके बाद यही सब चलता रहा। शादी के कुछ महीनों बाद मैंने माँ से कहा था—"माँ, उस घर में रहना बहुत मुश्किल है। मुझे दिन-रात बहुत सताया जाता है। वो सब बर्दाश्त करने की ताकत मुझमें नहीं है।"

—"शादी की है तो निभाना भी सीखो! अपना घर अपनी मेहनत से ही बनता

है!'' माँ की आवाज बहुत रूखी थी। उसमें ये जानने की जिज्ञासा नहीं थी कि मैं क्या कहना चाहती हूँ। मैंने ही बात को आगे बढ़ाया।

—''माँ, चाय बनाने के लिए भी कोई योग्यता की जरूरत होती है क्या? छः कप चाय बनाने पर ही ठीक चाय बन पाती है क्या? चादर ठीक नहीं लगाया, अदरक लंबा क्यों नहीं काटा, भिंडी हरी क्यों नहीं दिख रही है?'' तड़फकर मैंने माँ को बहुत कुछ बताना चाहा था।

माँ के मजबूत दिल पर मेरी बातों का कोई खास असर ही नहीं हुआ। मैंने सोचा था, ये सब सुनकर माँ मुझे अपने सीने से लगा लेगी। पर माँ का जवाब ऐसा लगा जैसे किसी ने मेरे ऊपर पत्थर फेंक दिये हों—''अब क्या करें? जिसको जैसा घर मिले उसे निभाना पड़ता है!''

उस दिन मैंने सोचा था कि माँ मेरे दर्द से बड़े आराम से पिघल जायेगी। मैंने उनकी आँखों में सहानुभूति खोजते हुए कहा—''खुद को अपमानित करवाने की कोई तो सीमा होनी चाहिये ना! दिन तो दिन रात में भी यदि...

—''अब रात की बात तो अपनी माँ से मत करो! कुछ तो लिहाज करो!'' माँ जो आराम से मुझसे बात कर रही थी अचानक चिढ़ते हुए मुझे चुप कराने के अंदाज में जोर से बोली।

हमारे समाज की सबसे बड़ी गंदगी! हमारा ढोंग, सेक्स से जुड़े हजार अपराध हो सकते हैं। घर में न जाने कितने बच्चों, किशोरों के साथ ये अपराध होते हैं। मगर आप खुलकर बात नहीं कर सकते। कुछ समझ नहीं सकते, कुछ समझा नहीं सकते हैं।

शारीरिक सम्बन्धों की बात से तो जैसे इनको डंक लग जाता है। उस जहर का क्या, जो अनगिनत बच्चे या औरतें सहती हैं? पर बोल नहीं सकतीं। ये रिश्तों की चादर भी कितनी घिनौनी है जिसके नीचे न जाने कितने जिस्म तड़फते हैं।

पर कुछ कह नहीं सकते क्योंकि जुल्म करने वाला कोई अपना ही है। ये लोग एक सुरक्षित जीवन चाहते हैं। उसकी कीमत कितनी, कौन-सी कुर्बानी है इससे इन्हें मतलब नहीं।

—''जुल्म के खिलाफ आवाज उठाना भी मुनासिब नहीं है? एक लड़की कहाँ जाये?'' मैंने माँ को मनाने की पूरी कोशिश की थी। उस दिन मुझे अपने स्वाभिमान

की चिंता भी नहीं थी।

किसी तरह इस घर में और इनके दिलों में जगह मिल जाये मात्र यही मेरी इच्छा थी।

—''तेरे पापा का भी यही कहना है कि तुझे एडजेस्ट करना होगा! हम कुछ नहीं कर पायेंगे!'' माँ ने अपनी बात को पूर्णविराम देते हुए कहा

—''मतलब मेरे दर्द की कोई दवा नहीं?'' आंखों से आँसू गिर पड़े थे यह सोचकर कि उस नर्क में वापस जाना होगा। उस दिन अपनी बेचारगी पर वो आखरी बूँद गिरी थी। उस दिन के बाद मैंने दिल को अलमारी में बंद करके रख दिया और चाबी को एक अनजान कुँए में फेंक दिया था।

जब दिल की बात सुनने वाला कोई नहीं तो उसे रास्ते से हटा देना चाहिए।

—''अपने दर्द की दवा खुद ही बनो! हर औरत यही करती है। मैंने भी किया, तुम भी करो! अपना सहारा तो तुम्हें खुद ही बनना पड़ेगा! तेरे भाई का रिश्ता एक बड़े घर से आया है। वो लोग अपने व्यापार में हमको शामिल कर रहे हैं। ऐसे में तुझसे जुड़ी कोई भी बदनामी हमारे करे कराये पर पानी फेर देगी।'' माँ को अपने बेटे की शादी की चिंता ज्यादा थी। बेटी को विदा करते वह अपनी जिम्मेदारी से मुक्त हो चुकी थी। कहाँ क्या है? केसा है? यह सब अब मुझे भुगतना है।

बड़ी अजीब जिंदगी है! लड़की का कोई अपना घर नहीं होता। एक मायका और एक ससुराल होता है। यदि दोनों जगह उसका कोई साथ ना दे, उसके पास अपनी आय का जरिया ना हो तो वह कहाँ जाये? इसका जवाब किसी के पास नहीं। इसका जवाब भी उसे खुद ही ढूंढना पड़ता है।

अब किसी से कुछ भी कहने का मतलब नहीं है। पिता ने कभी दो पल मुझसे बात नहीं की। मेरा ससुराल कैसा है? मेरे साथ उनका व्यवहार कैसा है? इसकी उन्होंने कभी चिंता नहीं की।

उन दिनों उन्हें अपने डूबते व्यापार को बचाने की बहुत चिंता थी। उसके लिए वो बड़े भाई का सौदा एक अमीर घर में कर रहे थे। उनकी नजर में उनकी समस्या का यही एकमात्र समाधान था। जो खुद चलकर हमारे घर आया था।

शादी के बाद पहली बार भी मायके में पति मुझे लेने नहीं आये थे। मेरे उदास मन की किसी ने चिंता नही कि मुझे भाई घर छोड़ गया था। दूसरे दिन किसी ने

यह पूछने की जहमत भी नहीं उठाई कि पतिदेव क्यों नहीं आये?

बड़ा भाई अपनी खुशी से ज्यादा मुझ पर ध्यान दे यह हो नहीं सकता। छोटे को तो अपने दोस्तों से ही फुर्सत नहीं मिल पाती है। शहर में रहकर भी उसने कभी मिलने की कोशिश नहीं की।

मेरा अकेलापन ही था, जो मैं दौड़-दौड़कर इनसे मिलने के रास्ते ढूंढती रहती थी। कभी हलवा बनाकर खिलाती तो कभी सबके लिए यहाँ आकर खाना बनाती। क्या करती, उस घर में साँस लेना बहुत मुश्किल था!

उस दिन अपने आँसू पोंछे, एक कसम खाई कि अब कभी भी किसी से कोई उम्मीद नहीं रखनी है। जब हर तरफ से उम्मीद टूट जाये तो जीवन में दो ही रास्ते बचते हैं या तो खुद को खत्म कर लिया जाये। जान देकर ही नहीं मरा जाता है, मरे हुए जीवन को जीना भी एक मौत ही है। दूसरा रास्ता मैंने चुना अपने हर दर्द का गला घोंट दिया!

उस दिन माँ के घर से वापस तो आई पर मेरे साथ दो सपने थे! एक जिस्म में और एक मन में! इन दोनों पर अपनी जान लगा देना है। इन्हें बड़े जतन से पालना है! मेरे पास सोचने के लिए यही सब बचा था।

मन को मजबूत बनाना है। अपने बच्चे को बहुत जतन से बड़ा करना है।

यह ठीक भी हुआ। जिस बीमारी का इलाज ही नहीं हो उसके लिए हकीम के पास जाने की क्या जरूरत है? इस सोच ने मुझमें एक रोशनी भर दी। मैंने ये सोचना छोड़ दिया कि पति और सास को कैसे खुश रखूँ?

चुपचाप उनका काम करना और उनकी बातें सुनना अपनी आदत बना लिया। हमारी ताकत लड़ने में व्यर्थ होती है जब हम किसी बात को स्वीकारते नहीं हैं। जब स्वीकार्य शुरू हो जाता है तो ऊर्जा नई दिशा ढूंढ़ने लगती है।

हम अपमान सहकर भी हल्के ही रहते हैं। बुद्ध ने सही कहा था—किसी की गाली हमें नहीं लगती है। वो तो उसी के पास रहती है। मेरे साथ भी यही होने लगा। इनके अपमान का पत्थर मुझे भारी नहीं कर पाता था। मेरा मन हल्का ही रहता था।

मैंने भी ये स्वीकार कर लिया था कि इन दोनों को खुश रखना मेरे बूते से बाहर की बात है। हर अपमान, हर जिल्लत मुझे मजबूत बनाने लगी थी।

घर में पैसों की बहुत दिक्कत होती थी। पति पूरी कमाई माँ के हाथ में रखते

थे। एक डिस्प्रिन की गोली के लिए भी कितना इंतजार करना पड़ता था!

यह याद करके दिल रो देता है, उस दिन मैंने पति से सुबह दस बजे कहा कि ''मेरे सर में बहुत दर्द है। दवा ला दो!" दोपहर के खाने तक दर्द के कारण मेरे आँसू गिरने लगे। तब मैंने कहा—''अब तो सर को हिलाना भी मुश्किल है। मुझे अभी इसी वक्त दवा चाहिए!''

''खाना खाकर दो मिनिट का भी चैन नहीं! इसे अभी दवा चाहिए!'' बड़बड़ाते हुए बेटे और शह देती माँ को ये समझ नहीं कि मैं सुबह से काम कर रही हूँ। भूखी इनकी सेवा कर रही हूँ। मुझे दो रुपये की दवा भी समय से नहीं मिल सकती है। पेट में बच्चा भी भूखा है!

अब मैं ये सोचने लगी कि कैसे कुछ काम कर सकूँ? दो पैसे कमा लाऊँ? कम-से-कम इमरजेंसी के लिए कुछ तो हो। रास्ते योग्यता में नहीं इरादों में ही छुपे होते हैं! जितने इरादे मजबूत होते हैं उतनी ही नजर पैनी होने लगती है। सफलता भी उतनी ही साफ दिखाई देने लगती है।

कभी कहीं पढ़ा था कि अंधेरी काल कोठरी में कैद होने पर भी हमसे हमारी आजादी कोई नहीं छीन सकता है। यह बात मुझे बहुत सटीक लगी।

पेट में पल रहे बच्चे से मैं हर पल बातें करती थी। उसे हमेशा मजबूत रहने की, खूब मन लगाकर पढ़ने की, खुश रहने की बात कहते अचानक मेरे अंदर एक बदलाव आने लगा। मुझे लगा, अपने आप को खुश रखना, मजबूत बनाना मेरी बहुत बड़ी जिम्मेदारी है!

अपने छोटे-छोटे दुखों पर दुखी होना अब मुझे बचकाना-सा लगने लगा।

यदि मैं ऐसे ही दुखी रही तो उस बच्चे को क्या सिखा पाऊंगी? अब लगने लगा कि सुखी रहना आसान है! अपने दुखड़े से खुद को जितना भी मारो कम ही है। उसकी जगह खुद को सम्हालना ज्यादा सुकून देता है।

जब हम अपने रास्तों को समझ जाते हैं तब मन एक जीत के अहसास से भर जाता है। वैसे भी जिन्दगी में सबसे पहले और आखिर में खुद को संतुष्ट करना ही सबसे जरूरी होता है। मानो तो बारिश की बूंद या फूल भी खुशी दे सकता है। नहीं तो हजारों सुखों के बीच जीने वाले भी खुदकुशी कर लेते हैं।

किसी बड़े कलाकार ने अपनी वैवाहिक व व्यावसायिक जिन्दगी से जुड़े तनाव

के चलते आत्महत्या की थी। वहीं एक कलाकार ने कहा था 'मैं सप्ताहांत में एक बार अनाथालय जरूर जाता हूँ। मुझे मेरी तकलीफें कभी बड़ी लग ही नहीं पाईं।'

उस दिन सरदर्द के बाद लगा थोड़ा आसपास आँख उठाकर तो देखें, कौन रहता है? किससे दोस्ती की जा सकती है? घर के ठीक पासवाला घर ही मेरा सहारा बन गया।

मैंने भी अपने जीवन को देखने का नजरिया बदल लिया। कभी मन टूट जाता, घबराता तो डॉक्टर आंटी के प्यार से मुझे ताकत मिलती।

घर के ठीक पास वाला घर ही उनका था। यह एक सुखद संयोग ही था। अंकल डॉक्टर थे। आंटी घरेलू महिला थीं। पर बहुत समझदार, वो एक अच्छी कलाकार थीं।

उनके हाथ में बहुत सफाई थी। वो गिफ्ट पैकिंग का काम अपने शौक से करती थीं। खाली समय में खुद को व्यस्त रखने का यह एक सुंदर उपाय था।

उनकी एक विवाहित बेटी विदेश में थी। जिससे मिलने वो दोनों साल में एक बार जाते थे। उनका घर बहुत बड़ा था। ऊपर के हिस्से में उन्होंने कुछ पी.जी. रख लिए थे।

पर वो उसको बहुत नियम के साथ चलाती थीं। बच्चों के पढ़ाई के परिणाम अच्छे हों, वो समय से घर आयें। सीधी-सी बात उनके पास वही रहे जो सचमुच पढ़ने आया है।

वो कहतीं ''मैं और तुम्हारे अंकल इस बात का ख्याल रखते हैं कि इन बच्चों को इस बात का दर्द है कि इनको इनके माता-पिता ने किन हालात में शहर में पढ़ने भेजा है? जिसे अपनी पढ़ाई का, अपनी जिम्मेदारी का अहसास नहीं वो हमारे घर में नहीं रह सकता है।"

ये बातें मुझे बहुत अच्छी लगतीं। जीवन के प्रति एक बेहद अनुशासित नजरिया होना ही चाहिए। वो वहाँ रह रही उस एक लड़की की तो फीस भी देते थे जिसके पिता अचानक चल बसे। यदि आंटी उसका साथ नहीं देती तो वो होनहार लड़की अबतक अपने गांव चली गई होती और उसकी शादी भी हो जाती।

मेरा इन दोनों से ही एक मधुर रिश्ता बन गया था। वह मेरा बहुत बड़ा सुकून था।

जिंदगी भी बड़ी अजीब है जब जागो तब सवेरा! उनके साथ बैठकर मैं भी गिफ्ट

पैकिंग करती थी।

आंटी कहती ''सरोज, तेरे हाथ में बहुत सफाई है। ऐसा लगता ही नहीं कि तू ये सब पहली बार कर रही है।"

पेट में पल रहे बच्चे के कारण कुछ इच्छाओं पर अपना वश नहीं रह पाता है। मुझे मिठाई अच्छी नहीं लगती थी। पर अब मुझे मीठा खाने की बहुत इच्छा होती।

मेरे पास कभी हाथ में एक रुपया भी नहीं होता था। होता भी तो मुझमें इतनी हिम्मत नहीं थी कि घर से बाहर अकेली जाकर कुछ ला पाऊँ।

घर में खाने का सामान जब आता तो मैं उसमें से मीठे बिस्कुट से अपना मन भरती। कभी तो शक्कर को कटोरी में लेकर खाने बैठ जाती थी।

मैंने कई बार पति और सास से कहा भी कि 'मुझे मिठाई खाने की बहुत इच्छा होती है! मुझे बाहर से कुछ लाकर दे दो। 'घर में मीठा बनाने को पूछती तो सास कहती, अभी नहीं दो-चार दिन बाद बना लेना।' उनको कैसे समझाती कि मुझे दिन में कई बार बस मिठाई ही खाने की इच्छा होती है।

पति ने मिठाई हमेशा मेरे कहने के दस दिन बाद ही लाकर दी। वो भी आधी से ज्यादा तो वो माँ-बेटे ही खा जाते। सजे सजाए घरों में जब एक लड़की अपने ससुराल आती है तो कोई नहीं जानता कि उसे रोटी भी पूरी तरह से नसीब होगी या नहीं।

कोई परिवार कैसा है यह जानने के लिए कोई दूसरा तरीका अपनाना चाहिए। ड्राइंगरूम में बैठ कर बनावटी बातों से किसी भी असलियत को नहीं समझा जा सकता है।

बहू को गहना, कपड़ा मिठाई से गोद भरने वाले कल उसे पेटभर रोटी देंगे या नहीं दिखावे की चमक में कोई नहीं जान सकता है। उसके लिए तो हकीकत के अंधेरे ही काम आते हैं।

शादी की शुरुआत में मैं तीन रोटी खा लेती तो पति नाराज हो जाते। 'इतना खाने की क्या जरूरत है?' एक दो बार उनके मना करने के बाद भी खा लिया तो कई दिनों तक मुझसे बात नहीं करते। अपने पेट को काटकर जीना भी एक मजबूरी थी। जिसकी कोई जरूरत तो नहीं थी पर यह एक बीमार आदमी का औरत पर हक जमाने का ऐसा तरीका था जो सपने में भी सोचा नहीं जा सकता था।

इस शादी ने वो सब करवाया जो एक यातनागृह में हो सकता है। ऐसे रिश्तों का नाम ही शादी होता है। पर ये शादियाँ किसी खरीदी-बेची गई औरत के सौदे से ज्यादा कुछ नहीं होती है।

मुझे अकेले बाजार जाने की इजाजत नहीं थी। कभी दवाइयाँ या कोई जरूरी सामान समय पर न आने पर याद दिला देती तो पति चिल्ला कर बोलते 'याद है मुझे, बहुत सारे काम होते हैं। याद नहीं रहता है। बार-बार एक ही बात कहकर परेशान मत किया करो!'

एक बार तो हद हो गई। ये दोनों बाहर बैठे कुछ खा रहे थे। इन दिनों मेरी नाक भी कुछ ज्यादा ही तेज हो गई थी। अपने कमरे से झाँककर देखा—ये रसगुल्ला और आलू की टिकिया खा रहे थे।

सोचा मुझे भी आवाज देकर बुलायेंगे पर ऐसा कुछ नहीं हुआ। जब वो दोनों खाकर वहाँ से हटे तो मैं बाहर गई। सोचा मेरे के लिए कुछ तो बचा ही होगा।

मुझे उस दिन एहसास हुआ कि मेरा इस घर में हाल कितना गिरा हुआ है। आजकल मेरी खाने की इच्छा हो तो उसे रोकना बहुत मुश्किल होता था।

कमरे से खाली दौने उठाते समय मन में यही ख्याल आया, अपने लिए तो ना सही अपने पेट में पल रहे बच्चे को आज उसकी पसंद का नहीं खिला पा रही हूँ। तो कल उसकी परवरिश में यदि किसी भी चीज की जरूरत पड़ेगी तो क्या होगा? खाली दौनों के साथ उसे कैसे सम्हाल पाऊँगी?

गर्म खाना इन माँ-बेटे को खिलाकर खाने वाली को बाहर से आया खाना खिलाना भी जरूरी नहीं? ऐसे परिवार होते हैं क्या?

मैंने अपने दुःख से हमेशा एक सबक लिया। यही मेरा जीवन का मंत्र रहा। खाने को न मिलना नयी बात नहीं थी। अब इस समस्या से कैसे निबटा जाए, यह मैं सोचती रहती।

जीवन का एक बहुत बड़ा सत्य मैंने पाया 'सोचने से रास्ते निकलने लगते हैं।' मैं मन्दिर जाने लगी। सास कहती 'अब ये मंदिर जाने की क्या जरूरत आ पड़ी है?'

अचानक एक यही रास्ता मुझे मेरी समस्या का समझ में आया। तो क्या करती? मैंने सास को कहा ''मेरा मन करता है दोनों समय ठाकुर जी के दर्शन कर लूँ!''

''घर के मंदिर में भी तो वहीं हैं।" सास ने चिढ़ते हुए कहा था।

''मन्दिर की आरती देखने का मन होता है। शायद ये बच्चा ही कहता है मुझे।" इस जवाब ने उनके ओंठ सी दिये थे।

मंदिर में दोनों समय वहीं बैठकर प्रसाद खाने की आदत-सी हो गई थी। मुझे वहीं प्रसाद खाते देख पंडित जी क्या समझे पता नहीं? पर अब मुझे ज्यादा प्रसाद मिलने लगा था। एक पुड़िया में भरकर!

पंडितजी आते-जाते मुझसे बात भी करने लगे थे। पंडिताइन तो अपने घर ले जाकर पूड़ी-हलवा भी खिला देती थी। उन दोनों के स्नेह में ईश्वर की दया बरसती दिखाई देती थी।

अब पंडिताइन जी मेरी काकी हो गई थीं। मैं उन्हें काकी बुलाती थी। वो भी मुझे बहुत प्यार करने लगी थीं।

मैं मन्दिर में जब भी हाथ जोड़कर खड़ी होती, ईश्वर से एक ही बात कहती 'तुम मेरे बाबा हो! मेरा कोई नहीं जो मेरी बात सुन सके। तुम मेरा साथ देना, मुझे अपनी कमाई की बहुत जरूरत है। मेरे लिए कोई रास्ता बना देना।

मेरे पास ऐसी कोई पढ़ाई नहीं है जो मेरी कमाई करवा सके। आज मिठाई के लिए तो यहाँ आ जाती हूँ कल बच्चे की बाकी की जरूरतों के लिए कहाँ जाऊँगी?

मैं मन्दिर में ही नहीं, कण-कण में तुमको महसूस करती हूँ। तुम मेरी नजर में इंसानियत में जीते हो। पूजापाठ में मेरा विश्वास नहीं है। तुम मेरी बात सुनना जरूर। मेरा हाथ थाम लेना। मुझे रास्ता दिखाना।' कई बार यह सब कहते-कहते कब आँसू बहने लगते पता ही नहीं चलता।

मेरी प्रार्थना कोई आस्तिक सुनता तो कहता भगवान तुम्हारी कभी नहीं सुनेगें। वो सिर्फ उनकी ही सुनते है जो पूजा करते हैं, व्रत रखते हैं। मगर मैं जानती थी वो मेरी सुनता है इसीलिए हजार तकलीफों के बाद भी मुझमें जीने की आस है। वो हर रास्ते पर मेरे साथ है।

उन नौ महीनों में जब भी किसी छोटी-मोटी दवा की जरूरत पड़ी आंटी मेरा ध्यान रखती थी। बिना अस्पताल जाये यदि घर में ही मेरा इलाज हो जाता है, तो पति और सास को भी मेरे उनके घर जाने से कोई शिकायत नहीं थी।

मैं कभी किसी के घर नहीं जा सकती थी। किसी से बात नहीं कर सकती थी। यदि किसी से बात करती तो सास आकर खड़ी हो जाती। एक स्पष्ट सन्देश सामने

वाले तक पहुंच जाता कि उन्हें हमारा बात करना पसंद नहीं है।

बाहर दो मिनट की बात से घर में दो घंटे का इतना बड़ा बखेड़ा खड़ा होता कि मैंने किसी से बात करना बंद ही कर दिया था।

आंटी के घर के बाद बस एक ही जगह जाने की इजाजत थी वो था, माँ का घर! वहाँ जाना बहुत कम हो गया था। मेरी तबीयत ठीक नहीं रहती थी। माँ भी भाई की शादी की तैयारियों में व्यस्त थीं। अब सच कहूँ तो मेरा मन भी नहीं होता था।

मेरे दो ही सहारे थे, एक पंडित जी और एक अंकल-आंटी। डॉक्टर आंटी कभी-कभी अपने घर बुला लेती थीं। उनके घर जाकर उनसे कभी मन की बात तो नहीं कह पाती थी। पर उन दोनों का स्नेह अच्छा लगता था।

नौ महीने पूरे होने पर जब अल्ट्रासाउंड हुआ तो बच्चा हिल नहीं रहा था। मैंने डॉक्टर से कहा—''मैं कहती हूँ तो वो हिल जाएगा!'' आश्चर्य से डॉक्टर बोली—''मैंने आज तक ऐसी माँ नहीं देखी जो अपने पेट के बच्चे से जो कहे और वो मान ले! बड़ा सुंदर रिश्ता है तुम्हारा अपने बच्चे से वो पेट में भी तुम्हारा कहना मानता है!''

अचानक मेरे मुँह से निकल गया—''ईश्वर सबको कुछ-न-कुछ देते हैं! यहाँ कोई भी पूरी तरह से खाली नहीं होता है!'' डॉक्टर इतने महीनों में मेरे बारे में काफी कुछ समझ चुकी थीं।

उनकी आँखों में आश्चर्य आया पर वो बोलीं कुछ नहीं! एक असफल पत्नी को छोड़ वो आज एक माँ को देख खुश थीं। मुझे छूकर बोलीं—''अपना ध्यान रखना, हमेशा ऐसे ही हिम्मत से जीना!''

रोली का जन्म मुझे बहुत खुशी दे गया। एक जिम्मेदारी, एक चुनौती मेरे सामने है। जिसे मुझे पूरी लगन से पूरा करना है। रोली से पति और सास को कोई खास मतलब नहीं था।

बेटी हुई तो इन माँ बेटे के बेहद कम सहयोग के साथ रोली की परवरिश शुरू हुई। जिसमें मुझे सबसे ज्यादा सहयोग डॉक्टर आंटी, अंकल का मिला।

आंटी ने मेरा बहुत साथ दिया। कोई भी छोटी परेशानी होती—दवाई हो या बच्चे की देखभाल हो, वो दोनों मेरे साथ होते। मुझे हौसला देते!

मंदिर से काका-काकी एक बार रोली को देखने आये थे। उन्होंने घर का जो

हाल देखा वो एक बार के लिए काफी था। वो कभी दोबारा घर नहीं आये।

रोली के पैदा होने की कोई खास खुशी न मायके में हुई न ससुराल में। रोली के पैदा होने के दस दिन बाद ही भाई की शादी थी, तो माँ उसमें बहुत व्यस्त थीं। रोली सीजर ऑपरेशन से हुई थी, इसलिए मैं शादी में जा नहीं पाई।

इस घर के लोगों ने मेरा उतना ही ध्यान रखा जितना कि बेहद जरूरी था। बाकी अपने दर्द को सहते हुए मैंने रोली को कैसे संभाला यह मेरा ईश्वर ही जानता है। घर में काम करने वाली बर्तन मांजने वाली बाई ने मेरा साथ दिया।

उसने एक घर का काम छोड़ दिया था। वो रोली को लेकर मेरे पास बैठी रहती थी। वो जानती थी कि मैं उसे पैसे नहीं दे सकती हूँ।

उसके बावजूद उसका अपनापन मेरा सहारा बना। अपनी कुछ साड़ियां जरूर मैंने उसे दे दी, क्या करती? उसकी मेहनत को बदले उसे कुछ तो देना था।

जिन्दगी में सहायता मिलनी हो तो किसी भी रास्ते से मिल सकती है। उसे मुझसे कोई आस नहीं थी पर वो मेरी आस जरूर बन गई।

पति की व्यस्त दिनचर्या में सुबह उठकर बहुत आराम से बैठकर टी.वी. देखना, उसके बाद दुकान जाना। दिन में उनका टिफिन दुकान में जाता था। वो एक ऐसा बेताज नवाब था, जिसकी दिनचर्या बहुत कम लोग ही बदल सकते थे। पर उनमें मैं और रोली शामिल नहीं थे।

हमारी दुकान जो ठीक-ठाक चलती थी, पति के सारे शौक आये दिन के नए कपड़े, रोज की शराब, बाहर का खाना और साथ ही शहर में ही रह रही मेरी ननद की हर छोटी-बड़ी जरूरत पूरी करती थी। साथ ही इस घर को भी घसीट ही लेती थी।

रात में दुकान बंद करने के बाद दोस्तों के साथ अपने दिन भर के तनाव को दूर करना और रात में करीब बारह, एक या दो बजे घर आना उनका रोज का नियम था। जो मेरी ननद के हमारे घर आने पर या सासु माँ के बीमार होने पर ही बदलता था।

उनको नए कपड़ों का बहुत शौक था। जो आज इस उम्र तक पूरा नहीं हो पाया था। घर में किराना देरी से आ सकता है। पर उनके अरमान...! कई बार घर में नमक या शक्कर भी नहीं होती थी। मगर उस माँ को अपने बेटे में कभी कोई गलती दिखाई

ही नहीं दी जिसे सुधारने की जरुरत हो।

रात को पति जब भी घर आये उन्हें खाना गर्म करके देना फिर खुद खाना यही नियम था। जिसका पालन मुझे करना पड़ता था।

रोली के पैदा होने के बाद बहुत मुश्किल आई। मुझे समय पर खाना चाहिए! नहीं तो इस नन्हीं-सी जान का पेट कैसे भरेगा? इस नियम से छूट सिर्फ गर्भावस्था में ही थी। अब कोई छूट की उम्मीद नहीं थी।

रात में घर आने पर पहले तो मैं उनको खाना गर्म करके देती थी। पर अब रोली के होने के बाद नींद ही नहीं खुलती थी। पति कमरे की बत्ती जलाकर शोर मचाते 'मुँह ढाँक कर सोईये, आराम बड़ी चीज है!' तब जाकर नींद खुलती। मुझे जगाने के लिए यही शब्द इस्तेमाल किये जाते थे। पर इस सबसे रोली भी उठ जाती और रोने लगती।

इस सबके बाद पति की नाराजगी ''तूने ये खाना गर्म किया है?''

एक बार बहुत सर्दी की रात थी। उस रात खाना ठीक से गर्म नहीं हुआ, तो पति ने मुझे अपने पास बुलाया। सब्जी के अंदर उसने मेरी उंगली डाल दी और कहा ''देख ये सब्जी गर्म की है तूने?'' कटोरी उठाकर मेरे मुँह पर फेंक दी! उस अपमान को मैंने कैसे सहा ये कहना तो मुश्किल है। पर हर अपमान मुझे अपने पति से दूर ही करता था। मन करता था इस आदमी को उठाकर फेंक दूँ, बिल्कुल एक पहलवान की तरह...

इस चिल्ला चोट का फायदा हमेशा की तरह मेरी सास लेती। बेटे को प्यार करती। मुझे यह दिखाती कि मुझे काम करना आता तो वो बेचारा मुझ पर नाराज ही क्यों होता?

दिनभर की थकान, अपमान के बाद रात को मेरा बेजान शरीर उसके जैसे भी काम आये। उसका तो मेरे पास कोई हल नहीं था। पर मुझसे भावनाओं की कोई उम्मीद वो ना रखें। यह मैंने अपने बर्फ से अहसास से उसे समझाना शुरू कर दिया था।

उसका नतीजा यह निकला कि हमारा रिश्ता लगभग खत्म-सा ही हो गया था। कई दिनों तक बात नहीं होती थी। एकदूसरे को आँख उठाकर देखे हुए महीना बीत जाता था।

वो रात मेरे जीवन में एक नया रंग ले आई। दुःख और अपमान में इंसान क्या नहीं करता है? खुद मर जाये, अपने बच्चे को भी जहर दे दे, घरवालों को मारे... मेरा मन भी अजीब था। हर नया दर्द एक नई दिशा ढूँढता था।

आज से मैंने लिखना शुरू कर दिया। गिरते आँसुओ में मैंने पहली बार कुछ लिखा था। आँखों के नीचे साड़ी का पल्लू रखकर मैं लिख रही थी।

मेरा ध्यान बस इतना ही था कि जो लिख रही हूँ वो कहीं पानी से मिट न जाये... शब्द अपने आप कलम के सहारे पन्ने पर उतर रहे थे।

ये मेरी लिखी कुछ पक्तियां थी। लेखन के कई उद्देश्य हो सकते है। जो समाज सुधार से लेकर नाम, दौलत, शौहरत या पेट भरने का साधन हो सकते हैं। लेखन मेरे लिए राहत का काम करने लगा।

वक्त इससे बड़ा कोई नहीं

तू मुझ में धड़कता है तभी तो मेरा जीवन चलता है।
आँखों के रास्ते, दिल के दरवाजे से,
कभी कुछ कहता, कभी कुछ दिखाता है।
तू मुझमें जीता है तभी तो...
खुशियों को दिखाता, दर्द से मिलाता रहता है।
कभी मुस्कान, कभी आँसू दे जाता है।
तू मेरा हाथ थामे रहता है, तभी तो...

कोई थामता, कोई गिरा देता है।
कभी ऊँचे तो, कभी नीचे रास्तों से मिलवाता है
तू मेरे संग ही सब देखता, समझता रहता है, तभी तो...

आज दुआओं में तो कल बददुआओं में करवट लेता रहता है।
कभी आकाश तो कभी पाताल में ले जाता है।
तू खुली बाहों से हर पल का स्वागत करता है, तभी तो...

तालियों की गड़गड़ाहट हो, चीखते सन्नाटे हों
कभी फूलों पे तो कभी कांटों में जीना सिखाता है
तू हर पल गुनगुनाता रहता है, तभी तो

छोटे बच्चे की परवरिश में रात की नींद खराब करके बच्चे को पालना। रात को पति की सेवा, ज्यादती सहना। एक औरत के अंदर कितनी ताकत होती है?वह ताकत घर में अपनी बिगड़ी जिंदगी को बचाने में किस कदर व्यर्थ होती है, इसका अंदाजा मुझे हर दिन होता था।

इतनी ही मेहनत मैं जीवन के किसी भी क्षेत्र में करूंगी तो कुछ तो पा ही लूँगी। यहाँ तो मुझे गालियाँ ही मिलनी है। जो बदल नहीं सकता है उस पर सोचना भी बेकार ही है।

रोली की उम्र बढ़ती गई। पर मेरी परेशानियाँ कभी कम नहीं हुईं। वो कब कितनी बढ़ जायें मैं नहीं जानती थी।

रोली के स्कूल के एडमिशन के समय भी मुझे एक बहुत बड़े तूफान का सामना करना पड़ा। पति का कहना था ''घर के पास ही जो सरकारी स्कूल है। रोली को उसमे ही भेज दो! बाद में किसी अच्छे स्कूल में एडमिशन करा देंगे।''

मेरा कहना था 'इस शहर में जो मिशनरी का स्कूल है, उसकी फीस भी ज्यादा नहीं है। उसमें छोटी कक्षा में एडमिशन मिलना आसान होता है। बाद में दिक्कत ज्यादा आती है।'

जिंदगी में जो हमेशा हारते हैं वह कभी जीत भी जाते हैं। यह भी जिंदगी के अजीब से चमत्कार है। स्कूल के एडमिशन की बात पर कुछ दिनों बहस होती रही।

उस स्कूल के पास ही डॉक्टर अंकल का क्लीनिक था। तो उन्होंने मुझे वहाँ से फॉर्म लाकर दे दिया था। रोली को मिशनरी स्कूल में एडमिशन मिल गया। इंटरव्यू में उसके नम्बर सबसे ज्यादा थे। उसे पहले साल जो स्कॉलरशिप मिली वो आजतक मिल रही है।

पति का फीस से जुड़ा डर ईश्वर ने अपने ऊपर ले लिया था। स्कूल के पन्द्रह साल! रोली के नम्बरों ने स्कॉलरशिप का पीछा नहीं छोड़ा।

मेरी माँ सरोज

जब से याद करूँ माँ की छवि ही दिखाई देती है। स्कूल के लिए तैयार करती, बस तक छोड़ने आती, पेरेंट्स टीचर मीट में अधिकतर अकेली आती, मुझे होमवर्क करवाती, मेरी पसन्द का खाना बनाती, मुझे सस्ता पर अच्छा सामान दिलवाती और भी न जाने कितने काम करती।

इन सब कामों को तो वो बड़े आराम से कर लेती थी। इसके अलावा भी कई काम होते थे। जो वो करती तो थी पर कभी उसकी आँखों में आँसू आ जाते तो कभी गुस्सा उसके चेहरे पर होता, पर वो कुछ कहती नहीं थी।

उसने मुझे सिर्फ पढ़ना ही नहीं सिखाया जीवन को ईमानदारी और लगन से कैसे जिया जाता है यह भी सिखाया। घर में पिता और दादी का साथ ना हो, उसके बावजूद पढ़ाई कैसे दिल से की जाती है। कैसे हँस कर जिया जाता है, यह भी मैंने माँ से ही सीखा।

वार्षिकोत्सव में मैं कभी भाग नहीं ले पाई क्योंकि उन कपड़ों के लिए तो हमारे पास पैसे होते ही नहीं थे। अपने अमीर मित्रों के साथ दोस्ती निभाना एक गरीब के लिये आसान नहीं हो सकता है। पर वो कला भी मैंने माँ में देखी।

स्कूल से पाँचवी कक्षा तक मैं किसी भी यात्रा पर नहीं जा पायी। एक तो यात्रा के पैसे, साथ ही चार-पाँच दिन जितने नए कपड़े मेरे पास कभी नहीं रहे।

बस एक बार मैं माँ पर बहुत नाराज हुई थी। जब वो मेरा परीक्षा परिणाम लेने अकेले देर से आई थी, वो भी टेम्पो से! उस दिन मुझे माँ के अकेलेपन, हमारी लाचारी पर बहुत गुस्सा आया था।

''घर में कार है उसके बाद अकेले इस तरह, इतनी देर से आने की क्या जरूरत है?'' जब स्कूल से बाहर निकलते समय मैंने माँ से गुस्से में पूछा था तो उन्होंने इतना ही कहा ''अभी रिक्शे में बैठते हैं, फिर बात करते हैं।''

रिक्शे में बैठते ही मैंने माँ से फिर पूछा ''अब बताओ क्या हुआ था?''

'तेरी दादी और पापा को चाय-नाश्ता देकर, तेरे पापा से दो बार कह दिया कि थोड़ा जल्दी कर लो! देर से जाने पर टीचर नाराज होती है तो उन्होंने चाय का कप मेरे ऊपर फेंककर मारा!' माँ ने अपनी बाँह दिखाई जो लाल हो गई थी। ''उसके बाद दोबारा कपड़े पहने इसलिए देरी हो गई।" माँ के हाथ को पकड़ने के सिवाय मेरे पास कोई शब्द नहीं थे।

माँ ने मेरे सर पर हाथ रखकर कहा ''हमेशा की तरह इस बार भी बहुत अच्छा परिणाम आया है। बस इस पर ही अपना ध्यान रखना बेटा।"

एक सिसकी माँ की आवाज के साथ बाहर भी न आ पाई पर मैंने सुनी... और रिक्शा चलानेवाले से अनजान हम दोनों को नहीं पता था कि वो भी ये सब सुन रहा था। मैं माँ के और करीब सटकर बैठ गई।

हम जब रिक्शे से उतरे तो रिक्शेवाले ने पैसे लेने से इनकार कर दिया। वो बोला—''बहन आप दोनों की बात मैंने सुन ली थी।"

कहते हुए वो मेरी तरफ देखते हुए बोला—''बेटा, माँ हजार तकलीफें सहकर अपने बच्चों को पालती है। उसके इस दर्द को कभी भूलना मत! मन लगाकर पढ़ना, एक दिन अपनी माँ की सेवा करना!'' कहते हुए उसकी आँखों में आँसू आ गये थे।

माँ ने उनके हाथ जोड़कर उनको धन्यवाद दिया। हम आगे बढ़ते पर उनकी बात ने हमारे बढ़ते कदम रोक लिये। उन्होंने भी हमारे हाथ जोड़े और बोले—''मैं भी बहुत पढ़ना चाहता था। पर जब तक माँ जिंदा थी तब तक ही पढ़ पाया। उसके बाद पिताजी ने पढ़ाई छुड़वा दी और काम पर लगा दिया। माँ ही थी जो घर-घर काम करके मेरी पढ़ाई के पैसे जमा कर लेती थी।

हमारी दादी ने घर की बिजली कटवा दी थी। मैं सड़क पर कम्बल ओढ़कर पढ़ता था। मुझे पढ़ने का बहुत शौक था। पर बाहरवीं से ज्यादा पढ़ नहीं पाया। एक बार तो एक पुलिसवाला पकड़कर रात में थाने ले गया था। उन्होंने तो मुझ पर शक किया था। पर जब उनको घर के बारे में बताया तो उन्होंने घर में बिजली लगवाई थी और पढ़ाई के लिए पैसे भी दिए थे। कब किसका कौन साथ दे दे, कोई नहीं जानता? जिनकी लगन सच्ची होती है वो कभी खाली हाथ नहीं रहते हैं।" कहते-कहते उसकी आँखें भीग गई।

माँ ने उनके हाथ जोड़ते हुए कहा ''बाबा आपका बहुत शुक्रिया! ईश्वर

आपका हमेशा साथ दे!'' कहकर माँ ने अपने आँसू छुपाए और हम घर में दाखिल हुए।

मुझे उस दिन अपने परिणाम की कोई खुशी नहीं हुई थी। माँ के जले हाथ के नीचे सब दब गया था।

मेरे साथ के बच्चे अपने माता-पिता की बुराई बड़े आराम से करते हैं तो मुझे समझ नहीं आता ऐसा क्या कुछ कर दिया मेरी माँ ने जो इन बच्चों के माता-पिता नहीं कर पाये?

एक बार यही सवाल मैंने माँ से किया था तो माँ का जवाब मुझे कहीं-न-कहीं ठीक ही लगा था। माँ का कहना था 'बच्चे को एक अच्छी परवरिश के लिए ये अहसास चाहिए कि मेरी माँ मुझे प्यार करती है। ये कहने का नहीं करने का काम है।' मेरी माँ जो हर वक्त घर में पापा और दादी की डाँट सुनती है, इतनी समझदार कैसे हो सकती है? मुझे वो उसकी ईमानदारी के कारण बहुत अच्छी लगती थी।

उस दिन माँ ने मुझे समझाते हुए कहा था—'हम बच्चे से ईमानदारी तबही माँग सकते हैं जब हम वो उसे दें भी। हम पार्टियों में घूमते रहें, उनको ट्यूशन लगवा दी और हर समय डाँटे कि तुम्हारे परिणाम दूसरों से अच्छे क्यों नहीं तो बच्चा थकने लगता है। उसके अंदर का उत्साह माँ के प्यार में ही छुपा होता है।'

'पर माँ, तुमने कम पैसों में ज्यादा सन्तोष मुझे कैसे दे दिया?'

माँ ने हँसकर कहा था 'जो भी था सब तो तेरे सामने था ना रोली! मैंने खुद पैसे उड़ाए और तुम पर बचत की ऐसा तो कभी नहीं हुआ ना?'

'माँ' कहकर उस दिन मैं माँ स`लिपट गई थी। मेरे पापा-दादी जो भी कहें मेरी माँ एक शानदार औरत थी। जिसे एक बच्चे को पालने का हुनर पता था।

पापा और दादी की डाँट को नजरअंदाज करना सीखना मेरा सबसे कठिन पाठ था। पर धीरे-धीरे मैंने वो भी सीख ही लिया। माँ कहती 'तुझे क्या करना है रोली, पहले ये समझ ले! या तो इन बुराइयों को भूलकर पढ़ ले या फिर इनमे उलझकर अपनी पढ़ाई अपना जीवन खराब कर ले! तूझे इससे क्या करना है बेटा? ये सब निरर्थक है। इस पर ध्यान मत दे!'

माँ के इस सवाल का जवाब तो यह था कि मुझसे ये सब बर्दाशत नहीं होता है। तुम यहाँ से कहीं और चलो। ये दिन-रात का अपमान, झगड़ा देखना आसान

नहीं है। पर कह कुछ नहीं पाती थी। माँ को घर में जिस हालत में देखती थी उस दुःख को बढ़ा नहीं सकती थी।

एक बात पर मैंने हमेशा गर्व किया कि माँ ने मुझे वो सब दिया जो देना उसके वश में था। उसनें मुझे सन्तोष, गर्व का ऐसा पाठ पढ़ाया जो बहुत सुविधा संपन्न लोग भी अपने बच्चों को नहीं पढ़ा पाते हैं।

ये मेरी माँ की ही ताकत थी जो मैं दूसरों की किताबों से पढ़कर भी हमेशा अव्वल आई। बच्चे हर पार्टी में नया ड्रेस, हर साल नए फोन के बावजूद अपने माता-पिता को कोसते हैं।

बच्चे का मन प्रेम से भर सकता है। सुविधा, साधन से कभी नहीं।

जब माँ ने अपना टिफिन सेंटर शुरू किया तो हमारा जीवन बदलने लगा था। अब हम आराम से स्कूल की फीस या दूसरे खर्चे उठा सकते थे।

जब से माँ ने काम शुरू किया। माँ बहुत खुश रहने लगी थी।

रोली की बीमारी

जब रोली बारह साल की थी तब एक बार उसे बुखार आया। तब अंकल-आंटी विदेश यात्रा पर गये हुए थे। दो-तीन दिन तो मेडिकल वाले से ही मेरे पति ने दवाई लाकर दे दी। रोली को बहुत तेज बुखार आता था। जो पानी की पट्टी रखने से भी नहीं उतरता था।

अपने बच्चे के लिए कोई पिता कितना लापरवाह हो सकता है। ये देखकर जी करता जोर-जोर से चीखकर सबको बताऊँ कि एक पिता या दादी अपने बच्चे के प्रति कितने लापरवाह हैं। ऐसा जो हम अनजान के साथ भी नहीं कर सकते वो इस घर में एक मासूम के साथ हो रहा था।

घर के पास के छोटे डॉक्टर के पास, सात दिन इलाज चला। मैं पति से कहती ''रोली को बिल्कुल आराम नहीं मिल रहा है। एक बार किसी बड़े डॉक्टर से मिल लेते हैं।''

''ये बुखार एकदम से नहीं जाएगा। दो-चार दिन दवा देकर देख तो ले! इतनी जल्दी कैसे ठीक हो जाएगा बुखार?''

''पहले से भी तो इसका इलाज चल रहा था। अब और कितने दिन तक देखते रहेंगे?''

''तो फिर जा, जहाँ जाना है चली जा! मेरा दिमाग मत खा!''

''थोड़े पैसे तो दो, मेरे पास इतने पैसे नहीं है कि इसका इलाज करवा सकूँ!'' मेरे पास सौ-दो सौ से ज्यादा रुपये नहीं होते थे।

''दुकान जाकर कुछ कमा लाऊँ? दो दिन का भी सब्र नहीं हो सकता है इस औरत को! इसकी चिक-चिक ने घर का माहौल खराब करके रख दिया है। मुझे भी रोली की चिंता है। एक तू ही नहीं है इसकी चिंता करने वाली!''

बात कहाँ से शुरू होकर कहाँ चली जाती, यही समझ नहीं आता था। काश! मेरे पास पैसे होते! न जाने कितने आँसू उन दिनों गिरे थे।

माँ का मन भी बड़ा अजीब होता है, बच्चे की तकलीफ में इतना उलझ जाता

है कि पति ने मना कर दिया तो अब क्या करना है ये समझने में दिन लग गये।

अंकल के कारण मेरे पति को जो मुफ्त के इलाज की आदत पड़ गई थी ये उसी के दुष्परिणाम थे। अचानक पंडित जी की याद आई। मैं भागती हुई मन्दिर पहुंची थी।

काका को रोली के बारे में जब सबकुछ बताया तो वो बोले ''इतने दिनों तक बच्ची को घर में क्यों रखा? जब बुखार नहीं उतर रहा था तो बड़े डॉक्टर के पास क्यों नहीं गईं?''

मेरे गिरते आँसू उनसे क्या कह गए वो ही जाने पर उन्होंने मुझे स्नेह करते हुए कहा ''अब रो मत बेटा! मेरे साले का बेटा बच्चों का डॉक्टर है। सरकारी अस्पताल में वो काम करता है। तेरी काकी के साथ अभी उसके पास चली जा! बाकी वो जैसा कहे कर लेंगे।'' काकी मेरे पास बैठी सब सुन रही थी। मेरे ऊपर हाथ रखकर बोली—''घबरा मत, सब ठीक हो जाएगा बेटा!''

खुशी के मारे भागती हुई घर पहुँची। घर में रोली अकेली सो रही थी। मेरी सास बाहर बैठी टी.वी. देख रही थीं। मैंने उनको बताया कि 'रोली को लेकर डॉक्टर के पास जा रही हूँ।' तो कहने लगी ''ऐसी भी क्या जल्दी है। अपने डॉक्टर ने जवाब तो नहीं दिया है ना अभी? हम भी इलाज करवा ही तो रहे हैं!''

''अब और इंतजार करना ठीक नहीं है। पंडिताइन जी का ही रिश्तेदार सरकारी अस्पताल में है। उसको दिखाकर आते हैं।''

उनको सही जवाब मिल गया था। जो उन्हें शांति देता, 'सरकारी अस्पताल' साथ ही काकी का साथ। माने फिर पैसों की बचत या छुट्टी, वो चुप हो गईं।

घर और रिश्ते कितने घिनोने हो सकते हैं ये कोई मुझसे पूछता? इस सबके बावजूद मैंने एक बात देखी 'अपने घर के बाहर रिश्तों की एक बड़ी दुनिया है जो हमारी हमदर्द हो सकती है। जरूरत है तो बस एक कदम बाहर की तरफ उठाने की।'

रोली को उठाया और हम काकी को अपने साथ लेते हुए अस्पताल पहुँचे। डॉक्टर देव के पास जाकर लगा, एक सही डॉक्टर के पास आये हैं। वह हमसे ध्यान से बात कर रहे हैं। हमारी बात को, रिपोर्ट को ध्यान से देख रहे हैं।

उन्होंने मुझसे रोली के बुखार को लेकर कई सवाल किए। बुखार किस समय

आता है? पूरे दिन कैसा लगता है? बुखार के समय कंपकंपी आती है? इन सब जवाबों के बाद उन्होंने कहा 'ये सारे लक्षण टी.बी. की तरफ इशारा कर रहे हैं। 'उनका कहना था कि मेरी आँखें आँसुओं से भर गई। 'क्या?' इससे ज्यादा कुछ नहीं कह पाई थी मैं।

उन्होंने पंडिताइन जी उनकी बुआ की तरफ देखकर हमें कहा था—"बुआ एक जाँच करनी पड़ेगी। जो थोड़ी महँगी है।"

'एक मिनिट मेरी बात सुन!' कहकर काकी उनको अंदर लेकर चली गई थीं। अंदर जाकर काकी ने उनको मेरी प्रसाद खाने वाली बात बताई या क्या हुआ पता नहीं। पर जब वो दोनों बाहर आये तो डॉक्टर देव ने इतना ही कहा 'आप कल रोली को लेकर आ जायें। बाकी मैं देख लूँगा।'

काकी ने मेरा हाथ पकड़कर मुझे समझाया 'बेटी, चिंता मत कर! बीमारी पकड़ में आ गई तो सही इलाज शुरू हो पायेगा।'

मन कह रहा था। बीमारी हुई ही क्यों? हमारी लापरवाही से? पैसों की कमी से? एक बच्ची अपने माता-पिता के मरे रिश्ते का शिकार हुई है। पर ये सब समझकर भी मैं क्या कर सकती थी? जो होना था, हो चुका था।

घर आकर जब रोली की टी.बी.की संभावना के बारे में पति और सास को बताया तो उन्होंने कहा 'अभी से चिंता करने की क्या जरूरत है? ऐसा कुछ नहीं होगा! दो-तीन दिन रुक क्यों नहीं जाती हो?'

जांच की कीमत पन्द्रह हजार रुपये सुनकर तो उन दोनों का दिमाग खराब हो गया। थोड़ा रुक कर मैंने उनको बताया 'काकी का भतीजा सरकारी अस्पताल में है। हमें इस जाँच के पैसे नहीं देने होंगे।'

यह सुनकर उन दोनों ने राहत की सांस ली। एक मूक सहमति मुझे मिल गई। कितनी अजीब बात है, डॉक्टर के पास मैं गई, इलाज काकी के कारण मुफ्त में हो रहा है। इजाजत मैं इनसे ले रही हूँ। जिनको न तो कोई दर्द है न ही परवाह...।

हमारी जिंदगी के दुख का कारण हम ही हैं। हमें समझ हो तो जागना शुरू हो सकता है। नासमझी में तो पूरी जिंदगी बीत सकती है ये कहते हुए कि 'मेरा नसीब खराब है!' ये सरासर गलत है।

आज पहली बार मन में ये बात आई। आज से पहले तो इनकी अनुमति ही

मेरी जरूरत होती रही है।

अगली सुबह आठ बजे रोली को लेकर अस्पताल जाना था। सुबह जल्दी उठकर पति, सास का नाश्ता बनाकर रख दिया था। दोपहर में आने में देर हो सकती थी इसलिए खाना भी बनाकर रखना था। मेरा फर्ज एक ऐसी चीज है जो हमेशा पूरा होना ही चाहिए। उसमें छूट की कोई गुंजाइश नहीं हो सकती है। इनकी बुद्धिमानी व चतुरता देखो कि फर्ज की बात एकतरफा ही चल रही है। चल क्या मुझे तो दौड़ा ही रही है।

मैंने पति से कहा 'थोड़ा जल्दी कर लो'। सरकारी जगह है। समय से नहीं पहुंचेंगे तो और देर लग जाएगी।'

सुनते ही हमेशा की तरह पति का चिल्लाना शुरु हो गया। 'रात को थक कर आया हूँ। दिन भर काम करता हूँ। आधा घंटा लेट हो जाएंगे तो क्या हो जाएगा? पहचान तो है ना!'

'अरे डॉक्टर पहचान का है तो क्या हुआ? सरकारी जगह में भीड़ कितनी होती है। एक तो मुफ्त में इलाज हो रहा है तब भी हम जिम्मेदारी नहीं दिखा सकते है क्या?'

इतना कह देना तो आग लगने जैसा खतरनाक था। ऊपर से पैसे की बात ने तो पेट्रोल का काम कर दिया।

'हम जितना देर से जाएंगे, रोली को भी तो भूखा रखा है जाँच के लिए। वो भी तो परेशान हो रही है। 'मेरा भी दिमाग खराब हो गया था जो बिना रुके बोले जा रही थी।

पति ने गुस्से में कंघा फेंका और मेरी तरफ पलटे ही थे कि काकी घर में आ गई। उन्होंने कितना और क्या सुना ये तो पता नहीं। पर वो बोलीं 'सरोज बेटी जल्दी कर! देव का फोन आया था। समय पर पहुंचना जरूरी है।'

'चलो काकी!' कहकर मैंने रोली का हाथ पकड़ा और हम बाहर निकल गये। ईश्वर भी कुछ काम कैसे करवा देते हैं? कोई नही जानता। मेरे पति अब आराम से तैयार होकर और नाश्ता करके आ जायेंगे। सबके काम अपने ढंग से करवाने वाले को मन-ही-मन शुक्रिया कहकर हम घर से बाहर निकल गए।

अस्पताल में डॉक्टर देव हमारा इंतजार ही कर रहे थे। रोली को लेकर वो लोग

जल्दी ही ऑपरेशन थियेटर में चले गए। जाते-जाते वो मुझे सांत्वना देकर गये 'आप घबराना नहीं, थोड़ी देर में ही रोली बाहर आ जायेगी। यह एक माइनर-सा काम है। 'हमें सद्भावना वहाँ से मिल जाती है जहाँ उम्मीद ही नहीं थी और जहाँ फर्ज के नाम पर खुद को रगड़कर रखा वहाँ से?

इस समय रोली के पिता को मेरे साथ होना था। पर साथ में वो हैं जिनके कोई भी काम, कोई सेवा मैंने नहीं की। यही ईश्वर की लीला है जो हमारे न बह सके आँसू को भी देख लेती है। हमारा साथ देती है।

ये पृथ्वी के सारे जीव एक ही पिता की संतान हैं। हमसब एक हैं। 'वसुदेव कुटुंम्बकम' यह बात कही तो जाती है पर आज महसूस भी होने लगी। कब कौन कैसे साथ दे, यह हम नहीं जानते। पर एक हाथ आगे बढ़ने के लिए, एक कंधा थके सर को रखने के लिए मिल ही जाता है।

रोली के ऑपरेशन थियेटर में जाने की बहुत देर बाद एक बेहद करीने से तैयार हुआ व्यक्ति हमारे पास आकर खड़ा हुआ। उसकी उपस्तिथि मुझ पर एक अहसान-सी लगी। जहाँ प्यार न हो वहाँ सुंदरता भी कुरूप लगती है।

रूप कितना निरर्थक लग सकता है यह आज मुझे पहली बार ख्याल आया। यह वही इंसान है जिसने मुझे रोटी और छत तो दी पर यह कभी मेरे दिल के अंदर तो दूर, करीब भी नहीं आ पाया। सौंदर्य बाहर नहीं होता है। ये एक भीतर का अहसास है। जहाँ इंसानियत हो, वहाँ मन ही दिखने लगता है। शरीर गौण हो जाता है। पति करीब आधा घण्टा हमारे पास बैठे होंगे। पर हमने क्या खाया है या हम चार-पांच घण्टे तक रुकने वाले हैं तो क्या खायेंगे?

ये सब काम तो उसने कभी किया ही नहीं। क्या करे उसका खाना, तैयार होना इस सबसे आजतक उसका मन नहीं भर पाया। दूसरों के बारे में सोचने का उसे कभी वक्त ही नहीं मिला।

अरे नहीं, ये बात मैं गलत कह गई। उसे दूसरों से निभाना भी बेहिसाब आता है बस जरूरत है वो व्यक्ति उसकी पहचान का हो या उसके किसी काम आने वाला हो!

तब उसका व्यवहार इतना क्रीम हो जाता है कि विश्वास ही नहीं होता। यह वही स्वार्थी इंसान है जिसे अपने खाने और पहनने के सिवा कुछ दिखता ही नहीं है।

उसकी आवाज मुझे विचारों के भँवर से बाहर ले आई। 'मैं दुकान जाता हूँ। तुम घर चली जाना।' कहकर वो अपनी जिम्मेदारी पूरी करके चला गया।

आज इसकी बहन बीमार होती तो क्या यह ऐसा ही रहता? उसे जाता देख मैंने एक बात अपने मन में पक्की कर ली। आज के बाद जबतक यह पूछे नहीं इसे रोली के बारे में कुछ भी नहीं बताऊँगी। मुझे घर जाने के लिए इसकी इजाजत की जरूरत थी जो मिल गई। मैं धन्य हो गई!

जब सारा काम बाहर वालों के साथ ही करना है तो कैसे चलना है ये हम ही निर्धारित करेंगे। हमारी चाल से ही हम डिफाइन होते हैं।अब मुझे अपनी चाल पर नजर रखनी है।

काकी ने मेरे ऊपर हाथ रखते हुए कहा ''बेटा कुछ खा लें? तूने सुबह से कुछ नहीं खाया होगा। रोली के आने के बाद तो तू उसे एकपल को भी नहीं छोड़ पाएगी। वो आती ही होगी। मैं भी भूखी हूँ बेटा।''

काकी ने एक साथ वो सब कह दिया जिसकी 'हाँ' स्वाभाविक थी। वो भी कुछ खाकर नहीं आई यह आखिरी तीर सबसे ज्यादा काम कर गया। मेरा जवाब ''काकी पहले क्यों नहीं बोला? अब तो बारह बजने वाले हैं। चलिए कुछ खा लेते हैं।"

माइनर ऑपरेशन बस नाम के ही होते हैं। रोली करीब दो घण्टे बाद बाहर आई। उसके बाहर निकलते ही हम उसकी तरफ भागे। काकी जैसी बुजुर्ग महिला का साथ, अपनापन मेरे किसी भी, अपने से ज्यादा था।

'आप आधा घण्टा इसे आराम करवा दीजिये। तब तक नशा उतर जाएगा। घर जाकर आप इसे कुछ हल्का खाने को दे सकती हैं। 'रोली पर हाथ रखते हुए मैंने देव को गौर से देखा।

'ठीक है।' से ज्यादा कुछ कह नहीं पाई थी मैं।

'तीन दिन में इसकी रिपोर्ट आएगी। आप मुझसे फोन से बात कर लेना। फिर देखते हैं, इलाज क्या शुरू करना है। तब तक बुखार आने पर ये दवा दे दीजिए। जो दवा मेरे पास थी वो दे दी है, बाकी आप ले लीजिए।'

कितना जिम्मेदार! एक साथ सारे काम कर दिए। अब कुछ भी पूछने की बात नहीं है। डॉक्टर देव ने मुझे पर्चा थमाया। मैंने अपने दोनों हाथ जोड़ लिए 'बहुत धन्यवाद' इतना ही कह पाई थी कि आँख भर आईं। मैंने अपने आँसू छुपाने चाहे।

काकी ने बात को सम्हाला 'अरे, धन्यवाद कैसा? देव अपना ही तो है।' अब काकी से क्या कहती कि 'ये आपका अपना है मेरा तो कोई नहीं! मेरे अपने तो घरों में आराम से बैठे हैं।'

रास्ते में काकी ने देव के बारे में बताया।

देव एक डॉक्टर

देव, अपने माता-पिता की इकलौती सन्तान हैं। पिता आर्मी ऑफिसर हैं। माँ एक डॉक्टर हैं। कोई दो महीने पहले उसके पिता जिनको अचानक लकवा हो गया था। देव जो आर्मी जॉइन करना चाहता था, पिता के पास रुक गया। और अब सरकारी अस्पताल में काम कर रहा है।

उसके माता-पिता ने उसे बहुत कहा था कि वह अपनी नौकरी पर चला जाये, पर वो नहीं गया। माता-पिता से इतना प्रेम करने वाले बच्चों को देखकर खुशी होती है। रोली और मेरे पति भी इसी श्रेणी में आते हैं। फर्क तो बस इतना ही है कि हम अपने बच्चों को कौन-सी दिशा देते हैं।

देव सिर्फ अपने माता-पिता नहीं सबके लिए अच्छा है। अपना स्टॉफ हो या अनजान, उसका व्यवहार बेहद अनुशासित व दया से भरा है।

बस यही छोटा सा परिचय है, मेरे पास देव का पर ऐसा लग रहा था कि यह छोटी-सी मुलाकात, बड़ी सहायता मेरे मन में बड़ी जगह बनाने लगी थी।

किसी को पसन्द करने के लिए सबकी जरूरतें अलग-अलग होती हैं। मेरी तो एक ही जरूरत थी। एक इंसान जो दर्द की भाषा को समझ सके। जिसको बाहर से नहीं अंदर तक देख लेने की समझ हो। जो देना जानता हो, जिसे किसी बात को समझने में एक पल भी न लगता हो। ये सब देव में था।

लम्बी बीमारी

घर आकर एक बार फिर रोली को बहुत तेज बुखार आया। पूरी रात उसको सहलाते हुए बीती।

अगले तीन दिनों तक मैं एक ही दुआ कर रही थी कि रोली का ये बुखार कोई बड़ा रूप नहीं ले ले। सब कुछ ठीक रहे। डॉक्टर देव को जिसका अंदेशा था वही हुआ—टी.बी.!

रिपोर्ट लेकर सीधी अस्पताल भागी। एक लंबा इलाज मेरे हाथ में था। अभी छः महीने बाद उसे आगे बढ़ाना है या नहीं, देखा जाएगा।

सरकारी अस्पतालों में टी.बी. का इलाज मुफ्त में दिया जाता है। बाहर से कुछ नहीं लेना पड़ता है। मेरे पति का एक और फायदा! मैं उस समय किस्मत पर बहुत नाराज हुई थी।

जिंदगी को हमारी भावनाओं से कोई मतलब नहीं होता है। वो तो बस चलती रहती है। निर्विकार भाव से!

हाँ, ये जीवन के रास्ते बहुत सारे सबक भी सिखाते जाते हैं। अब यह हमारी दृष्टि है कि हम क्या और कितना समझ पाते हैं।

रोली की तबियत ठीक नहीं थी पर वो जिद कर रही थी कि मैं स्कूल जाकर उसकी पढ़ाई की बात करके आऊँ।

रोली की पढ़ाई का बहुत ज्यादा नुकसान हो रहा था। मैंने पति से कहा 'आप स्कूल जाकर प्रिंसिपल से बात कर आओ। रोली को रोज के नोट्स घर पर ही मिल जाये तो अच्छा होगा।'

'अब पहले इसकी बीमारी को तो देख लो फिर पढ़ाई भी हो जाएगी। आज ही कलेक्टर बनना है क्या इसको?'

'यह रोली की ही इच्छा है कि उसे नोट्स मिल जायें। अब उसका सारा काम मैं देख तो रही हूँ। आप स्कूल चले जाओ।'

'पता है तू ही सब कर रही है तो फिर यह काम भी खुद ही कर ले!'

'स्कूल बहुत दूर है। टेम्पो से जाने में चार घण्टे लग जाएंगे। अभी रोली को अकेले छोड़ना ठीक नहीं।'

ये शब्द मुँह से क्या निकले कि पति और सास ने घर सर पर उठा लिया।

'मतलब तू सब कुछ कर रही है और हम तमाशा देख रहे हैं?'

बाहर के कमरे में कोई आकर खड़ा है। हमारी सारी बातें सुन रहा है। काम वाली बाई ने कब दरवाजा खोला और डॉक्टर देव हमारे घर में खड़े थे। किसी को होश नहीं था।

अपने आप को सम्हाला, रात में रोली का बुखार बहुत तेज था। और दवाई लेने के बाद उसे उल्टियां आ रही थीं। जिसके कारण वो बहुत कमजोर हो गई थी। मैंने रात को काकी को ये सब बता दिया था।

इसीलिए देव घर आ गये थे। वो बोले 'रोली को परेशान न करें! मैं सुबह बुआ जी से मिलने आऊँगा तो रोली को भी देख लूँगा।' बुआ जी का बहाना सिर्फ इसलिए ताकि हमें ये अहसान न लगे। किसी की अच्छाई की कोई सीमा नहीं होती तो किसी की...।

अब किसे पता था कि रोली के साथ वो हमारे घर का महाभारत भी देख लेंगे।

कमरे में रोली को देखते हुए उनके चेहरे से ये बिल्कुल नहीं लग रहा था कि वो एक पूरा दृश्य देख चुके हैं।

मेरे पति और सास जब भी बीमार पड़े, मैंने पूरी निष्ठा से उनकी सेवा की थी। हमेशा यही सोचती थी कि फर्ज में खरा होना हमारी अपनी जरूरत है। किसी का व्यवहार कैसा भी हो हमें अपना फर्ज पूरी ईमानदारी से पूरा करना चाहिए।

फर्ज के इस महल की नींव तो कब की डगमगा चुकी थी अब दीवारें भी गिरने लगी थी।

आज ये दोनों रोली और मेरे साथ जो कर रहे हैं, उससे एक बात समझ में आई कि फर्ज की बात हम जैसे बेवकूफ ही करते हैं। ये जिस मिट्टी से बने हैं वहाँ इन सबके लिए जगह ही नहीं है।

'कोई भी परेशानी हो तो, बेझिझक आप बात कर सकती हैं।' कहकर देव चले गए।

मैं अपनी बिखरी जिंदगी को देखकर अपने आप से सवाल कर बैठी 'मैं इस आदमी के साथ क्यों रह रही हूँ?'

जवाब भी उसी वक्त आ गया। मैं इतनी सशक्त नहीं हूँ कि पूरा घर खर्च उठा सकूँ।

देव

जीवन भी बड़ा अजीब है। शरीर का विज्ञान पढ़ने वाले को मन की भाषा की कितनी समझ हो यह उसकी संवेदना पर निर्भर करता है।

मुझें माता-पिता का भरपूर प्यार मिला। एक अनुशासित जीवन ने मुझे वो सब दिया जो एक बच्चे की जरुरत होती है।

पढ़ाई, सफलता सब बड़े आराम से मिलती रही। जीवन में कभी कोई रोड़ा आया ही नहीं। अचानक पापा को लकवा हो गया और मैंने सेना की पोस्टिंग छोड़ दी। पापा की इस हालत को देखकर मेरा मन बदल गया। मैं पापा की सेवा कब कर पाऊँगा?

पापा अब व्हीलचेयर पर हैं। घर में काम करने वालों के लिए पैसों की कोई कमी नहीं है। माता-पिता अपना बेहतर से बेहतर अपने बच्चे को देते हैं। हम फर्ज के नाम पर क्या करें यह हमारी मर्जी है। सेवा बातों से भी की जा सकती है। अपने हाथों से खाना खिला कर भी की जा सकती है।

माँ ने बहुत समझाया था—'देव यह पोस्टिंग मत छोड़ बेटा! तेरे पापा को मैं देख लूँगी। सही उम्र में सही जगह पहुँचना कॅरियर की जरूरत है।'

'माँ, सबसे बड़ा सही काम तो यही है कि मैं अब पापा की सेवा करना चाहता हूँ। उनका स्वास्थ्य दिन पर दिन गिरता जाएगा। पर मेरे पास होने से जो हो सकता है, उसे समझाना तो मुश्किल है। पर शायद कोई चमत्कार हो जाये।' कहते-कहते मेरी आँखों में आँसू आ गये।

माँ तो अपना रोना रोक ही नहीं सकीं। वो रोते-रोते बोलीं 'तुझमें जो समझ आई है वो ईश्वर का आशीर्वाद है हमारे लिए देव!' उस दिन हम माँ-बेटे खुल कर रोये थे।

एक जांबाज आर्मी ऑफिसर का चलना फिरना बन्द होने के क्या मायने हो सकते हैं। ये हम तीनों समझ रहे थे। मेरे रुकने से पापा बहुत खुश थे। उनके अंदर जल्दी से ठीक होने की भावना बलवती हो उठी।

वो बड़े प्यार से सर पर हाथ रखकर कहते थे, 'हमें छोड़कर तुझे जल्दी आर्मी में जाना है। मैं बहुत जल्दी चलने लगूँगा। तुझे ज्यादा दिन अपने पास नहीं रखूँगा।'

पापा का हाथ पकड़कर मैंने कहा था—'माता-पिता की सेवा सिर्फ एक बात नहीं, एक अहसास है। जो मेरे लिए बहुत जरूरी है। आपने जो मेरे साथ मेरा बचपन जिया है। मुझे हमेशा समझा है। ये उस सब का एक बूँद जितना ही है।'

'पर बेटा तेरा कॅरियर? वो पीछे छूट गया।'

'कुछ पीछे नहीं छूटा है पापा! सब यहीं है। आपसे दूर रहकर मेरा जाना अब सम्भव नहीं है। यहाँ भी अस्पताल में काम कर रहा हूँ। वहाँ सैनिक होते, यहाँ आम लोग हैं, जिनके काम आना अच्छा लगता है।'

पापा को रोज नाश्ता और रात का खाना मैं अपने हाथों से खिलाता था। उनको नहलाकर ही मैं अस्पताल जाता था। माँ कहती थी 'देव, ये सब तू मत कर बेटा! थक जाएगा। अपने पास लोग हैं जो ये सब कर सकते हैं।'

'अब एक सैनिक से थकने की बात मत करो माँ! पापा को नहलाने में मैं थकता नहीं, ताजा हो जाता हूँ!' माँ का हाथ कई बार मेरी पीठ सहलाता था। उसमें मैं वो सब सुन लेता था जो वो कहना चाहती थी।

अपने माता-पिता की सेवा क्या होती है? हमको पढ़ा कर, वो अपना फर्ज पूरा करते हैं। और हम भी उनसे दूर रहकर, फोन पर बात करके अपनी जिम्मेदारी पूरी कर लेते हैं। उनकी आखरी साँस से पहले उनके पास आकर बच्चे कौन-सा फर्ज पूरा करते हैं? ये मुझे आज तक समझ नहीं आया।

फर्ज तो यही है कि जरूरत पड़ने पर उनके पास रहकर उनकी सेवा की जाए। जो मैं आज कर रहा था। मेरा साथ उन्हें बहुत गर्मी देता है, यह मैं समझ सकता हूँ।

मेरा कॅरियर उनके लिए चिंता का विषय है, पर मातृभूमि की सेवा से पहले मैं पितृभमि करना चाहता था।

माँ कहती भी थी 'तू इस युग में पैदा होने जैसा नहीं है देव! तुझे जीवनसाथी भी तेरे जैसा ही मिल जाये, बस यही हम दोनों का आखरी सपना है।'

'माँ, तुम जानती हो, शादी हो यह मेरे लिए जरूरी नहीं है। तुमने और पापा ने मुझे अपने प्यार से इतना भर दिया है कि शादी तब ही होगी जब दिल बोल उठे। नहीं तो मैं अपने आप से संतुष्ट हूँ। शादी कोई ऐसा जरूरी काम नहीं है जिसे हम हर हाल में करें।'

किसे पता था, दिल सरोज को देखकर बोल उठेगा। एक बारह साल की बच्ची की माँ! अपनी बीमार बच्ची को सम्हालती, साथ ही एक बीमार पति को सहती। जो उसे प्रेम, इज्जत तो दूर बेटी की बीमारी के लिए पैसा भी नहीं देना चाहता है।

बुआ ने जब उसके गर्भवती होने के समय मन्दिर में मिठाई खाने की बात बताई थी तो मेरा मन कह उठा कि अभी इसे अपने साथ, अपने घर ले जाऊँ। माँ को बता दूँ कि यही है वो जो मुझे छू गई।

दिल और दुनिया दो बिलकुल अलग रास्ते हैं। जिनपर चलकर कब किससे किसका मिलना हो सके या हम नहीं कह सकते हैं।

प्रेम की कोई भाषा नहीं हो सकती है। वो सिर्फ आँखों के बोल ही समझ सकती है। जो शब्द कभी कह नहीं सकते, जो कान कभी सुन नहीं सकते हैं।

सरोज की आँखें देखकर ऐसा लगा, यही है वो जिसके इंतजार में मैं बैठा था। एक औरत जो बड़ी हिम्मत से अपनी बीमार बेटी, नालायक पति सबको सम्हाल रही है।

जिसकी आवाज से ही उसकी सुंदरता का अहसास होता है। बहुत सच्ची, साफ, मधुर जो अपने पति की डाँट अस्पताल में सबके सामने भी सुनती है पर उसका पूरा ध्यान अपनी बेटी की तरफ ही है।

'तुझे याद नहीं रहता कौन-कौन से कागज लाने थे अस्पताल में, अब मैं घर जाऊँ? एक काम भी ठीक से नहीं कर सकती है।'

ये सुनकर भी वो औरत अपने आसपास के माहौल का ख़्याल करके सिर्फ इतना ही बोली 'आप रोली के पास बैठो मैं घर जाकर ले आती हूँ।'

'अब महान बनने की जरूरत नहीं है। मैं जा रहा हूँ।' कहकर पैर पटकता हुआ वो चला गया। सरोज को मैं क्या सांत्वना दूँ? ये समझ ही नहीं आया। चुपचाप वहाँ से निकल गया।

किसी की वैवाहिक जिन्दगी में मेरा दखल? यह असम्भव है। सिर्फ इतना ही कह पाया 'मैं आधे घण्टे बाद आपको बुलवाता हूँ। तब तक आप चाय पी लीजिये।'

सरोज ने तब कोई जवाब नहीं दिया था। शायद वो अपने आँसू बड़ी मुश्किल

से रोककर मेरे सामने खड़ी थी। जो मेरे जाने का इंतजार कर रहे थे।

एक घण्टे बाद सरोज की आँखें कह रही थीं कि वो एक सागर पार करके आईं हैं।

रोली की बीमारी के कारण कुछ समय तक सरोज से मिलना हुआ। जब रोली पूरी तरह ठीक हो गई तो फिर मेरे पास कोई वजह नहीं थी, सरोज से मिलने की। एक बार जब वो अकेली आई थी।

'रोली का इलाज अब कितने महीनें और चलेगा?'

'बस, एक महीना और ये सारी दवाइयाँ देनी हैं। फिर सब बन्द हो जाएगा।

'फिर कभी कोई काम हो तो' मैंने कहा था। उसकी आँखों में गहरे तक जाकर मैं एक जवाब ढूंढ़ना चाहता था। पर उसने अपनी पलकें झुका कर कह दिया कि वो इसकी इजाजत नहीं दे पायेगी। जिसका एक सपाट उत्तर मिल गया था।

'नहीं अब कोई जरूरत नहीं है। आपका बेहद शुक्रिया! आपने जो सहयोग दिया...।' कहकर सरोज ने हाथ जोड़ लिये थे।

वो दिन हमारी आखरी मुलाकात थी। हम दोनों की आँखों में बहुत कुछ था। जिसे हम समझ कर भी नजरअंदाज कर गये।

वक्त एक बार फिर आगे बढ़ गया। वो कब किसी के लिए ठहरा है? जो उसके साथ चलना चाहे चले, नहीं तो वो अकेला गुनगुनाता हुआ आगे बढ़ जाता है।

मेरा दिल

रोली की बीमारी, डॉक्टर देव से मिलना इन सबमें इतनी उलझ गए थी कि मन कुछ अजीब से सपने देखने लगा था।

बालू के घर,
पानी पर लकीर,
क्यों सुकून देती हैं?

हवा के महल,
ताश के घर,
क्यों अच्छे लगते हैं?

जिंदगी के रास्ते,
जरूरतों के वास्ते,
बहुत तपाते हैं।

जो सुन न सके,
वो गीतों में,
जो देख न सके,
वो चित्रें में,
जो मिल न सके,
वो ख्यालों में,
जो चल न सके,
साथ-साथ राहों में,
उनके बगैर जीते हैं।

वो हरदम ख्यालों में रहते हैं।

दुआओं के धागे,

धड़कनों के आगे,
हम साँस तो लेते हैं।

पर
यादों में जीते हैं।
इसीलिए,
बालू के घर,
पानी पर लकीर,
सुकून देतें हैं।

जीने के सहारे,
कुछ यादों में,
कुछ बातों में,
बस यूँ ही मिलते हैं।

इस बीमारी के बावजूद रोली अपनी कक्षा में तीसरे नम्बर पर आई।

अब मुझे भी अपने मन को हर तरफ से हटा कर शांत करना जरूरी था। कुछ दिनों डॉक्टर देव की बहुत याद आयी। उस पागलपन ने जो करवाया उसे याद करना भी बेवकूफी लगती है। वो सब छोड़कर मैंने अपने आप को एक बार फिर घर से जोड़ लिया।

उम्र के साथ रोली के खर्चे बढ़ने लगे। जिसके लिए मुझे बहुत ज्यादा परेशानी उठानी पड़ी। उसके स्कूल की फीस यदि पहले महीने मिल गई है तो अगले महीने लेट फीस के बाद भी दस बार स्कूल से संदेशों के बाद भी फीस कब जाएगी पता नहीं?

पति के अपने खर्चे ही कभी पूरे नहीं होते। घर खर्च के प्रति उन्होंने अपनी जिम्मेदारी कभी समझी ही नहीं थी। कभी वक्त से पैसा मिल जाता था। और कभी पता नहीं कब?

यही सब करते हर वक्त मन में एक ही बात चलती रहती थी कि मुझे भी पैसा कमाना है। रोली की जरूरतें उम्र के साथ बढ़ेंगी। उसकी पढ़ाई और उसकी पढ़ाई से जुड़े खर्च उठाना अब आसान नहीं होगा।

किसी और से उम्मीद तो आज तक नहीं की थी। और उसके लिए अपना वक्त या अपनी सोच को कहीं भी लगाने का कोई मतलब भी नहीं था।

डॉक्टर अंकल का जीने का तरीका मुझे एक नई ऊर्जा से भर देता था। अपने काम के बाद भी वो कभी खाली हाथ नहीं बैठते थे। अपनी नर्सरी हो, किताबें या आसपास के लोगों की मदद वो सबके लिए हरदम तैयार रहते थे। नियम व अनुशासन के पक्के अंकल को सब लोग प्यार करते थे।

अंकल क्लीनिक के बाद का खाली समय पौधों को देते थे। उन्होंने घर के बगीचे में एक छोटी सी नर्सरी बना कर रखी थी। जिसमें वो आम, पीपल, गुलमोहर की पौध तैयार रखते थे। घर के आस-पास या कॉलोनी में जहां भी उन्हें लगता कि पेड़ लगाने की जगह है, वह जाकर पेड़ जरूर लगाते और उस पर एक गार्ड भी लगा देते।

आसपास के ही लोगों से विनती भी करते हैं कि वे उसे पानी दें और उसका ध्यान रखें। दो-चार दिन में उन्हें जब भी समय मिलता तो वो या आंटी जाकर उस पौधे को जरूर देखते थे। अंकल आंटी का संवेदनशील मन मुझे बहुत अच्छा लगता।

वो दोनों अपनी जिम्मेदारी को पूरी करते हैं। दूसरों की सहायता भी करते हैं। अंकल आसपास के लोगों को पेड़ उपहार में भी देते थे। उनकी कोशिश रहती थी कि ज्यादा से ज्यादा पेड़ लगें। वो घर के बगीचे में पौधे तैयार ही करते रहते थे।

अंकल के पेड़-पौधे के काम में कहीं कोई रोजगार का अवसर है क्या? कई बार सोचा पर समझ नहीं आया। कम पढ़े लिखे इंसान की यही तकलीफ है। उसे बिना पैसों के ही तुरन्त कमाई के अवसर वाला काम चाहिए। वो टयूशन हो सकता है। पर उसके लिए या तो आप किसी स्कूल में काम कर रहे हों या आपमें कोई विशेष योग्यता हो। मेरे पास दोनों ही नहीं थे।

कुछ दिनों तक तो यही सोचती रही कि मैं क्या कर सकती हूँ? मैं जब भी कुछ नयी डिश बनाती, तो पास वाली आंटी को हमेशा देकर आती थी।

उस दिन मैंने उनको पावभाजी बना कर दी। उन्होंने जो शब्द कहे वो मन को एक राह दिखा कर चले गये थे–'सरोज, तेरे हाथों में अजीब सा स्वाद है। तेरे अंकल कहते हैं कि सरोज जैसा खाना कोई नहीं बना सकता है!'

आंटी जब भी बाहर जाती अंकल के खाने का ध्यान मैं ही रखती थी। उनसे

सम्बंध रखने में मेरी सास और पति को कोई आपत्ति नहीं थी। एक तो अंकल डॉक्टर थे, रोली का इलाज हमेशा मुफ्त में ही हुआ। उन्होंने दवाइयाँ भी अपने पास से ही दीं।

अब ऐसे लोगों से रिश्ता रखने को कोई क्या मना करेगा? अपने फायदे की समझ तो सबमें होती है। पूरी कॉलोनी में वही एकमात्र घर था जहाँ मैं जा सकती थी। बाकी तो किसी से बात करने पर पति का शक या सास के सवाल मुझे घायल कर देते थे।

इस बार निशा आंटी कुछ दिनों के लिए अपनी बेटी के पास जा रही थीं। तो मुझसे बोली—'सरोज तू अंकल को दोनों टाइम का खाना बना कर दे देगी क्या? घर में जो खाना बनाती थी, वह अभी छुट्टी पर है। उसका पति बीमार है। वह अगले पन्द्रह दिन नहीं आयेगी।

तुझे तो पता है, स्वाति को बच्चा होने वाला है। उसके पास जाना जरूरी है! अंकल को भी साथ में ले जाती पर इस समय वो अस्पताल छोड़कर नहीं जा पायेंगे।

—'अरे आंटी, इतना सोचने की क्या जरूरत है? अंकल को खाना मैं दे दूंगी! आप आराम से स्वाति के पास जाओ!'

मैंने उन दिनों अंकल को खाना तो दिया, पर हर बार एक ही बात सोचती रही कि क्या ऐसा ही टिफिन सेंटर नहीं खुल सकता है? यह भी तो मेरी एक आय का जरिया हो सकता है!

थोड़ा बहुत तो काम शायद मिल ही जाएगा! कॉलोनी में पढ़ाई के लिए रहने वाले, कामकाजी लोगों को खाने की जरूरत तो होती होगी!

जब आंटी घर आईं तो उन्होंने मेरे हाथ पर कुछ पैसे रख दिये। मैंने पैसे लेने से मना किया तो वो बोलीं—'क्या मैं जानती नहीं कि तेरे घर के हालात क्या हैं। बेटा तूने काम कर दिया यही क्या कम है।'

अंकल तो कह रहे हैं कि 'तुम तो जब चाहे बच्चों के पास चली जाया करो! सरोज के हाथ का खाना तो मुझे इतना अच्छा लगता है कि उसके बाद मेरी कोई जरूरत नहीं!' तुम इस खाना बनाने वाली को बोलो—'सरोज जैसा खाना बनाना सीख ले!'

मैं और आंटी खिलखिलाकर हँस तो पड़े मगर उस हँसी ने कमाई का एक रास्ता

दिखा दिया। मैंने आंटी से बोला—'आंटी यदि मैं अपना टिफिन सेंटर खोल लूँ तो?'

'मुझे पैसों की बहुत जरूरत रहती है। छोटी-छोटी जरूरतों के लिए कई बार पैसे मांगने पर भी पैसे नहीं मिलते हैं। मेरे लिए तो ठीक है, रोली की दवाई या स्कूल से जुड़ी किसी जरूरत पर समय से पैसे नहीं मिलते हैं तो मन बहुत दुखी हो जाता है। आप तो जानती है मुझे देने वाला कोई भी नहीं और सच कहूँ तो किसी से भी नहीं चाहती!'

—'सरोज, काम शुरू करना है तो कर ले! ज्यादा सोच मत! मैं तेरा साथ जितना दे सकूँगी, दे दूंगी! अपने सब पड़ोसियों को बोल दे! हमारे घर में किराएदार, जो लड़के पढ़ रहे हैं। अभी तो खुद ही खाना बनाते हैं। परेशान होते रहते हैं! आए दिन होटल से खाना लाते हैं। तू बात कर लेना तेरे हाथ का खाना ऐसा है की जिसनें एक बार तेरे हाथ का खाना खा लिया तो फिर कभी वो उस स्वाद को भूल नहीं पायेगा! तुझे जब भी काम शुरू करना हो मुझे बताना, हम मिलकर सब कर लेंगे!'

—'आंटी, आपको तो साथ देना ही होगा! स्वाद नाम कैसा रहेगा?'

—'बहुत अच्छा! बहुत सही सोच रही है तू! जल्दी से शुरु कर ले! तेरे अंकल भी अपने अस्पताल में, परिचितों को और घर में आने वालों को तेरे बारे में बतायेंगे तो काम चल ही जायेगा!'

आंटी की बात सही थी। मैं ज्यादा सोचती तो कुछ नहीं कर पाती। मैंने कुछ ही दिनों में अपना काम शुरू कर दिया।

इतने समय तक मेरी आंटी से दोस्ती गहरी हो गई थी। घर की बातें मैं उनको बता देती थी। एक बार मैंने उनसे पूछा—'आंटी, जब भी इनको कोई बात बुरी लगती है तो ये घर के काँच के बर्तन तोड़ने लगतें हैं। जितना रोको उतना ही ज्यादा नुकसान होता है। मैं बहुत डर जाती हूँ। क्या करूँ? इनको कैसे समझाऊँ?'

'तू यही तो गलती कर रही है, वो जो करे उसे करने दे! उसे कुछ समझाने की जरूरत नहीं है। वो तुझसे ज्यादा समझदार है। वो तुझे डरा कर ही रखना पसंद करता है। इसलिए ये सब करता है।

'नुकसान तो उसके पैसों का ही हो रहा है ना! तू डरती है और वो तुझे डराता है। आराम से उसे बर्तन तोड़ते हुए देखा कर! फिर बताना क्या हुआ? हाँ, एक बात याद रखना, तू तो हमेशा स्टील के बर्तन ही खरीदना।' दुःख भी हँसी का कारण बन

सकता है।यह मैंने आंटी से सीखा। हम दोनों खिलखिलाकर हँस पड़े।

'वैसे हुआ क्या था?' आंटी ने पूछा

'दो दिन से मुझे बुखार है, रोली की परीक्षा चल रही है। छोटे से घर में कोई आ जाये तो बच्चे को पढ़ाई में दिक्कत आती है। ननद-जीजाजी को खाने पर बुलाना था। मैंने कहा 'अभी रुक जाइये। दो-चार दिन बाद बुला लेंगे। उस दिन ननद का जन्मदिन था। तो बस हंगामा।'

'हंगामें से डरते नहीं, उनका डट कर मुकाबला करते हैं। डर की उम्र डर ही होती है।'

सच में तब से काँच के बर्तन टूटने बन्द हो गए!

पति और सास को जब मैंने बताया कि मैं अपना टिफिन सेंटर खोलना चाहती हूँ, तो उन दोनों ने चिल्लाना शुरु कर दिया। 'यह सब करने की क्या जरूरत है? क्या घर का खर्चा चल नहीं रहा है? खाना बनाना तो आता नहीं है!'

रोली जरूर एक बार चिंता में पड़ गई थी। वो बोली 'तुम्हारा काम कितना बढ़ जाएगा? अभी तो दिनभर सबको हाथ में खाना देती हो, इनके झूठे बर्तन उठाती रहती हो। टिफिन सेंटर का काम माने, और ज्यादा खाना बनाना, उसे भेजना। कैसे कर पाओगी?'

'कुछ तो करना पड़ेगा बेटा! ऐसे कब तक चलेगा? शुरुआत तो करते हैं। फिर रास्ते ही समझायेंगे की क्या करना है? डरने से तो कभी आगे ही नहीं बढ़ पायेंगे। इन सबकी डाँट सुनने से ज्यादा कठिन काम कोई और नहीं हो सकता है। तू मत डर। काम शुरू तो करें बाकी वक्त ही समझायेगा।' रोली की चिंता गलत नहीं थी। पर इन दिनों मुझ पर एक धुन सवार हो गई थी कि कुछ करना है।

'टिफिन बना कर क्यों अपनी ही हंसी उड़ा रही हो? कौन खाएगा तुम्हारे हाथ का खाना? जिनके टिफिन सेंटर होते हैं उन लोगों को खाना बनाने का ढंग होता है! उनके पास व्यवहार भी होता है! कुछ दोस्त होते हैं, जिनके कारण काम चलता है। दोस्ती, पहचान, व्यवहार ही तो होता है जिसके कारण लोग सफल होते हैं।'

यही सब कह कर पति और सास ने मेरा मन तोड़ने की भरपूर कोशिश की। मैंने एक ही जवाब दिया—'रोली की बढ़ती उम्र के साथ पैसों की जरूरत बढ़ रही

है! मैं अभी शुरूआत तो करती हूँ।' सोचा, उनकी बाकी की बातों का जवाब वक्त को ही देने दो!

क्या पता कल कौन सही साबित हो जाये?

स्वाद टिफिन सेंटर

दो टिफिन से शुरू हुआ काम धीरे-धीरे बढ़ता गया। काम बढ़ने के साथ घर में पैसा आया तो बहुत सारी बुराइयों पर ताले लग गए। मैंने भी हर दिन एक नया सबक सीखा।

कोई पैसा समय से दे जाता है। कोई बाद में दे देता, पर शांति से सब निबट जाता है। किसी की पैसा देने कि नियत ही न हो तो वो खाने में कमी निकालेगा या कुछ भी ऐसा करेगा जिससे पैसे कम हो जाये या देने ही न पड़े।

हर हाल में सब कुछ मुझे ही सम्हालना पड़ता था। मेरी परेशानी मेरे पति को एक अजीब सी खुशी देती थी। एक बार तो शोर सुनकर पास से अंकल आ गए पर मेरे पति से कमरे से बाहर नहीं निकला गया।

अच्छा भी है, मुझे भी ये बात समझ में आने लगी कि कितनी और कैसी सावधानियों के साथ अपने काम को आगे बढ़ाना है।

मेरी हर अड़चन मुझे एक सबक दे जाती। साथ ही ये बात पूरी तरह से समझ में आ गयी। मेरे कमाये पैसे का फायदा तो ये लोग उठा ही लेंगे पर मेरी असफलता इन्हें बहुत खुशी देती है। सब कुछ समझकर जीना आसान होता है। हमारा दुःख प्रेम की कमी नहीं, हमारी उम्मीद होती है।

मैं आराम से रोली की जिम्मेदारियों को पूरा करने लगी। रोली ने अपनी पढ़ाई पूरी लगन व ईमानदारी से की। उसे कभी पढ़ाई से जुड़े प्रवचन नहीं देने पड़े! जो बच्चे घर में माता-पिता के रिश्तों का बेमेल रूप देखते हैं वो या तो सम्हल जाते हैं या लड़खड़ा जाते हैं।

रोली को सम्हालने के लिए मेरा प्यार, मेरी मेहनत काफी थी। सच तो यह है कि उसने मुझे ज्यादा सम्हाला, ज्यादा हिम्मत दी! मेरे हर लड़खड़ाते कदम पर एक वो ही तो थी जो मेरे साथ खड़ी होती थी।

टिफिन सेंटर एक शुरुआत थी। मेरी खर्चे से जुड़ी परेशानियाँ खत्म हो गईं। इस बात पर ध्यान ही नहीं गया कि खाने का पूरे घर का खर्च अब टिफिन सेंटर

ही उठा रहा है। पति ने बड़े आराम के अपने हाथ पीछे खींच लिए थे।

उनकी कमाई अब उनके शौक पर ज्यादा काम आने लगी थी। ननद को ज्यादा उपहार दिए जाने लगे थे। मेरा मान या अहसान मानने की जरूरत तो उन्होंने कभी समझी ही नहीं।

उल्टा कभी अपने हक की बात की तो यह कहकर मुझे चुप कर दिया गया कि कमाई तो तुम हमारे घर से ही कर रही हो ना! तो फिर अहसान कैसा?

बहुत छोटे स्तर से शुरू हुआ यह टिफिन सेंटर धीरे-धीरे अपना आकार लेता गया।

इसके बढ़ते आकार में आसपास के बच्चों की बर्थडे पार्टी हो या कॉलोनी की औरतों की किटी पार्टी सब कुछ समाता गया!

'स्वाद टिफिन सेंटर' इस खाने के स्वाद ने मुझे बहुत अपमानित करवाया था। आज वही स्वाद मेरी जिंदगी का सबसे खूबसूरत हिस्सा बन चुका था। जब एक बार काम चल निकला तो कॉलोनी ही क्यों, कॉलोनी में ही रहने वाले लोगों के रिश्तेदार, पड़ोसी और दोस्तों के यहाँ भी छोटी-छोटी पार्टियों के खाने के आर्डर मुझे मिलने लगे।

जाहिर था, अब घर से बाहर जाना, लोगों से मिलना सब कुछ बढ़ने लगा। दुनिया में बुराई का मुंह बंद करने का एक अचूक रास्ता है। सफलता के साथ पैसा! जब पैसा आता है तो न जाने कितने बुराइयों के दरवाजे और मुंह सब बंद हो जाते हैं।

यह वही सरोज थी, जो कभी घर से बाहर नहीं निकलती थी। जो सिर्फ आंटी के घर जा सकती थी। कॉलोनी की औरतों से जिसने कभी बात नहीं की, वही सरोज आज पूरे शहर में न जाने कितने लोगों से मिलने लगी।

कितने लोगों के घर जाने लगी। सफलता का सिलसिला भी कहाँ रुकता है? आँचल में हरसिंगार के फूलों की तरह एक के बाद एक पता नहीं कितने सारे फूल आते जाते हैं।

वैसे ही मेरा भी सफलता से आँचल भरता गया। मैंने छोटी-छोटी कुकिंग कांपटीशन में भाग लिया और न जाने कितनी जगह कितनी नई चीजें बनाई। मेरी हर जीत के साथ मेरे ग्राहकों की संख्या और मेरी पहचान बढ़ती गई।

उसके बाद आंटी के ही घर में एक कमरा आंटी ने मुझे दिया और मैं कुकिंग क्लास चलाने लगी। दो साल में कितना कुछ बदल गया!

कुकिंग क्लास में नित नये लोगों से मिलना होता था। हर इंसान के साथ एक जीवित कहानी चलती है।

दुःख के सागर में कई औरतें जीती हैं। किसी की परेशानी अपने बच्चों से जुड़ी होती है तो किसी की परिवार से। मेरे कई महिलाओं से बहुत अच्छे सम्बन्ध हो गए थे।

घर से बाहर निकलने पर पता चलता है, यहाँ बहुत लोग जीवन संघर्ष कर रहे हैं। बहुत सारी महिलाएँ घर से बाहर निकलकर कुछ काम करने और कुछ पैसे कमा लेने को तरसती हैं। हाँ, बहुत सी वो भी हैं जिनके जीवन में सुख, शांति है। वे कुछ थोड़ी-सी निश्चित ही भाग्यशाली हैं।

मेरे हाथ के खाने को मेरे मित्र तरह-तरह के नाम देने लगे। कल तक जिस खाने के साथ 'कभी तो कुछ ढंग का बनाना सीख लो!' अब इस की जगह 'स्वाद स्पेशल ने ले लिया।'

जिस दिन राष्ट्रीय स्तर की कुकिंग कंपटीशन में मैंने भाग लिया उस समय सपने में भी नहीं सोचा था कि आगे इतनी बड़ी सफलता मेरे हाथ लगेगी। इस सारे दौर में अंकल आंटी और रोली ने जो मेरा साथ दिया उसके बगैर यह कुछ भी संभव नहीं था।

हमारे जीवन में सफलता हमें अकेले नहीं मिलती। कोई ना कोई, कहीं ना कहीं किसी रूप में हमारा साथ देता है! हमें हौसला देता है! हमें स्वीकारता है! तभी हम सफलता की सीढ़ियों पर चढ़ पाते हैं।

आज जो भी मिला है उसमें सच कहूँ तो एक हिस्सा मेरे माता-पिता का और एक मेरे पति और मेरी सास का भी है। यदि मैं इन रास्तों से नहीं गुजरती, मेरे पति और सास अच्छे होते तो मैं भी एक आम औरत की तरह अपना घर चलाती होती। पार्टियों में जाती, नित नये कपड़े पहनती और खुश रहती।

यदि दुख में माता पिता साथ देते, तो उनके घर रहती। उसके बाद क्या करती है, पता नहीं? इसका जवाब अभी मेरे पास नहीं। मगर चुनौतियों के साथ जैसे मैंने खुद को संभाला है, सच कहूँ तो मेरी हर सफलता दूसरे हर सुख से बहुत बड़ी है।

सफलता का कारण हमेशा हुनर, किसी का प्रोत्साहन हो जरुरी नहीं! बुरी परिस्थितियों में खुद को सम्हालने की चाहत, बहुत ज्यादा बढ़ जाती है। क्योंकि जब

कोई रास्ता ही नहीं बचता तो एक संघर्ष जागता है हमारे भीतर। यदि इस संघर्ष में हम जीतेंगे नहीं तो जीयेंगे कैसे?

आज इस जीत में एक बहुत बड़ा हिस्सा अंकल-आंटी का था। वो अचानक अपनी बेटी के पास चले गए। उनके दामाद का कोई बड़ा ऑपरेशन होना था। उन दोनों की बहुत याद आ रही थी। आज वो होते तो मैं सबसे पहले उनके घर ही जाती। आंटी घर के बाहर खड़ी मेरा इंतजार कर रही होती।

वो तो रोली को भी अपने पास बुला लेतीं। घर में जो हंगामा होने वाला था। उसकी सावधानी वो पहले ही रखतीं। मुझे कितना सहारा, साहस दिया था। आज वो अस्पताल में बेटी-दामाद के साथ बहुत चिंता में होंगी।

मैंने रोली को बोला—'अभी आंटी से बात कर सकते हैं क्या?'

'तुम फोन लगा कर देख लो! अगर वो अस्पताल से बाहर होंगी तो उठा लेंगी।'

फोन लग गया। आंटी ने सबसे पहला सवाल किया—घर आने पर क्या हुआ था?'

'कुछ नहीं आंटी, बस थोड़ा-सा हंगामा किया था।'

'सच बता, तुझे हाथ नहीं लगाया था?'

'मेरी खामोशी बोल गई।'

'तूने जो पाया है वो बहुत है बेटा, हम सब बहुत खुश हैं। अपना ध्यान रखना। हमारे घर की चाबी भी तो तेरे पास ही है। तू कल वहाँ आराम कर लेना।' आंटी जो मरहम लगा सकती थीं वही लगा रही थी।

'आप परेशान मत हो। रोली मेरा बहुत ध्यान रख रही है। बिल्कुल आपकी तरह।'

'चल अब आराम कर। बहुत रात हो गई है। कल बात करेंगे।'

'ऑपरेशन कैसा रहा? दामाद जी ठीक है?'

'हाँ, रवि अच्छा है। तू घर से, कोई भी सामान की जरूरत हो तो, ले लेना। ठीक है?'

'सब ठीक है। हम कल बात करते हैं।' कहकर मैंने फोन रखा। आंटी से बात करके लगा, मैंने अपनी माँ से ही बात कर ली।

एक धन्यवाद

आज घर वालों की चिंता बहुत थोथी लग रही थी। उनसे बात करने का मन भी नहीं था। अचानक मन बदल गया। सबको माफ कर देने का दिल ने कहा। सबके लिए धन्यवाद का भाव आने लगा। सफलता के उजाले कितने अंधेरों को दूर कर सकते है, इसका अहसास आज हुआ।

मुझे अपनी माँ, सास सब बहुत अच्छी लगने लगीं। उन सबने जो किया वो या तो उनकी बंधी सोच का नतीजा था या फिर उनके दर्द का दोहराव!

आज मेरी माँ अपनी अमीर बहू के कारण घर में बेहिसाब अकेलापन, आर्थिक तंगी सह रही है। उनकी बहू से जो अपमान उनको मिलता है वो पैसे से ज्यादा भारी पड़ रहा है।

मैंने माँ को फोन लगाया जो मुझसे बात करने के इंतजार में ही बैठी थी । पहली घण्टी में ही फोन उठा लिया। वो कहने लगी 'सरोज, बेटा कब से तुझसे बात करने को बैठी हूँ। तेरी बहुत याद आ रही थी। टी.वी. पर जो देखा तब से तेरी चिंता हो रही थी। तूने बहुत बड़ा काम किया है सरोज। तू एक हिम्मत वाली लड़की है। हमनें तो अपने जीवन में वही किया जो हमें कहा गया। उससे ज्यादा की समझ कभी आई ही नहीं।

सरोज, पर तूने जो पाया वो एक मिसाल है। हर औरत के लिए और रोली के लिए भी। तूने बुरा सहा पर बुरा किया नहीं। अपना रास्ता ही बदल लिया जो बहुत मुश्किल है। किसी ने भी तो तेरा साथ नहीं दिया'—कहकर माँ रोने लगी।

'माँ, रोओ मत, मेरी चिंता भी मत करो। जो होना था वो बहुत पहले ही हो चुका है। अब मुझे कोई बात डराती नहीं है। हम सब अपने जीवन में यही गलती करते हैं। सहारा ढूंढ़ते हैं। हमारी हिम्मत ही हमारा सहारा बनती है।

इंसान वक्त के हिसाब से मिलते बिछड़ते रहते हैं। कोई आएगा फिर हम आगे चलेंगे ऐसा नहीं होता है। हम चलते हैं तो लोग मिलने लगते हैं। मेरे साथ भी यही हुआ। लोग मिलते गए मैं चलती रही। कोई भी अकेला कुछ नहीं कर सकता है।

पर हिम्मत तो अपनी ही होती है। वो हो तो सब हो जाता है माँ!'

'बेटा, कल घर आ जाना। तुझे सीने से लगाने को मन तड़फ रहा है। तेरा बड़ा भाई तो अब इस घर में आता नहीं, छोटे की नौकरी लग गई है तो वो भी विदेश जा रहा है। अब तेरे पापा से अकेले दुकान नहीं सम्हलती है। दो बेटे तो हैं पर किस काम के? हम अकेले हो गए।' कहकर माँ फिर रोने लगी।

मैं माँ से क्या कहती कि संतान को दोष देना भी ठीक नहीं है। माता-पिता भी गलतियाँ करते हैं। पर मानते नहीं। जब परिणाम बुरे निकलते हैं तब रोने से क्या होता है?

मैंने उनका दिल रखते हुए कहा 'मैं आ जाऊँगी। पर तुम अपना ख्याल रखना। मेरी चिंता मत करना।' कहकर जब मैंने फोन रखा तो मुझे अपने बड़े भाई की याद आई जो दिखने में बहुत अच्छा था। हमारा व्यापार भी उसने ही सम्हाला था, जो कुछ सरकारी नीतियों के चलते बुरी तरह डगमगा गया था।

पापा को उस समय उस व्यापार को सम्हालने का एक ही रास्ता दिखा, जो भैया की शादी एक बड़े घर में करने का था। भाई ने कहा था 'बहुत अमीर घर की लड़की अपने घर में ठीक नहीं।' पर उसकी नहीं सुनी गई।

पैसों की चमक के पीछे भाई की आवाज दब गई। शादी के कुछ साल बाद ही भाई हमारा घर छोड़कर ससुराल के व्यापार को सम्हालने लगा था। एकलौती बेटी के पिता को एक घर दामाद मिल गया। जो उन्होंने शायद पहले से ही सोचकर रखा था।

छोटा भाई अब बाहर जा रहा है। पर इस सबका दोष सिर्फ बच्चों को नहीं दिया जा सकता है। देव जैसे बेटे भी हैं। स्वाति जैसी बेटियाँ भी हैं जो अपनी जिम्मेदारी बखूबी समझते हैं। खैर!

रोली मेरे पास खड़ी थी। मेरे हाथ को पकड़कर बोली 'अब तुम कल से अपने जाने की तैयारी कर लो! देख लो तुम्हें क्या-क्या लेना है। वहाँ इस समय सर्दी होगी।'

'हाँ बेटा, तेरी तैयारी भी तो करनी है। वहाँ किसी के लिए कुछ खरीदना हो तो लिस्ट बना लो।'

'अभी सोचा नहीं, देखते हैं।'

रात का एक बजे गया। मैं बहुत थक गई थी।

रोली हाथ में दूध का गिलास लेकर आई—'माँ उठो, रात के बारह बज गये हैं। ये लो तुम दूध पी लो और सो जाओ! पापा बाहर ही सोफे पर सो रहें हैं।'

मैं आँखों से कहना चाह रही थी कि अभी इच्छा नहीं है। उसके पहले ही रोली बोली—'कोई बहाना नहीं, उठो!'

उसके हाथ से दूध का गिलास लेते हुए मैंने उसके हाथ को अपने हाथ से दबाते हुए कहा—'मुझसे ज्यादा किस्मत वाला कोई नहीं!' हम दोनों की आँखें चमक उठीं। इन आँखों से मुझे जो मिला है वो अनन्त है।

तारों ने चादर,
लहरों ने पायल,
जुगनू ने रास्ते,
बनाए तेरे वास्ते!

सूरज से आशा,
चाँद से भाषा,
शब्दों की माला,
है तेरे वास्ते!

रातों में दिए,
हाथों में लिए,
अंधेरे चीर दूँ
मैं तेरे वास्ते!

प्यार के पल,
आज और कल,
दिल का सुकून,
बनूँ तेरे वास्ते!

तेरी आँखों में,
तेरी यादों में,
मेरा छोटा-सा घर,

तेरे दिल के रास्ते!

साँसों की डोर,
दुआओं के छोर,
कभी न खाली,
हों तेरे वास्ते!

रोली के लिए दुआ ही जीवन है। मेरे जीवन से मुझे जो मिलना था मिल चुका, इससे ज्यादा का तो अरमान भी नहीं है। पर रोली को सिर्फ सफलता नहीं किसी का प्रेम भी मिले।

कहते हैं ना! माता-पिता के ऋण से कभी उऋण नहीं हो सकते। पर मेरी जिंदगी तो लगता है इससे उलट ही है। मैं कभी इस बच्ची के ऋण... सोचते-सोचते आंखों में आँसू आ गए। जिन्हें रोली ने देख लिया। मेरे कंधे पर हाथ रखते हुए वो बोली—'अब कुछ मत सोचो, सो जाओ! तुम बहुत थक गई हो!'

मैं उठ खड़ी हुई और मैंने अपनी बाहें फैला दीं। रोली को एक दीर्ध आलिंगन में लेने। कुछ अहसास शब्दों के मोहताज नहीं होते! जीवन के अँधेरे कब कौन उजाले में बदल दे कोई नहीं जानता है? चलते रहना ही जीवन है।

रोली को बहुत जल्दी नींद आ गई। मैं उठी, आज देव की बहुत याद आई। पर उसका कोई मतलब नहीं था। कुर्सी पर बैठ लिखने लगी।

साहिल पर बैठी तो नदी मुझसे बोली-
सदियाँ बीती मैं लैला को न भूली!

वो तन्हा बैठी यहाँ मजनूं को याद करती,
अश्क बहते पर कोई फरियाद न करती!

वो अश्क मैंने आज भी सम्हाले हैं,
वैसे मोती मैंने फिर नही पाये हैं!

वो प्रेम था या
इबादत थी?

मैं आज भी उस अहसास को तरसती हूँ,
नदी हूँ तो क्या, मैं भी प्रेम को समझती हूँ।

मैं भी मिलन की जुस्तजू में बहती हूँ,
तभी तो सागर से जा मिलती हूँ!

वो चार दिन

अगली सुबह सोचा था, कोई नया ही हंगामा देखने को मिलेगा! जिंदगी कब क्या दिखा दे कुछ पता ही नहीं? सुबह आँख खुली, अभी घर के काम की शुरूआत ही हुई थी।

कल जो सारे उपहार मैं छोड़ आई थी वह लेकर कंपनी वाले आ गये। वो आंखें, जिनसे मुझे एक नई कड़वाहट की उम्मीद थी, वो अब सामान के साथ व्यस्त हो गईं। उपहारों से लगभग आधा कमरा भर गया था।

जिसमें कपड़े, माइक्रोवेव, न जाने कितनी चीजें पड़ी थीं। मेरी सास और पति वह सब देखने में व्यस्त हो गये। मुझसे बिना पूछे यह तय होने लगा कि क्या इस घर में रहेगा और क्या मेरी ननद को देना है।

हमेशा की तरह मेरे पति की मौन सहमति इसमें शामिल थी। हम माँ-बेटी इस सब में दखल देना नहीं चाहती थी। वैसे भी दखल का एक ही मतलब था 'एक बड़ा तूफान!'

मैं, अपने मित्रों से बात कर रही थी। रोली हाथ में एक बहुत बड़ा पैकेट लेकर आई और बोली—'मां देखो, कितना सुंदर लहंगा मिला है तुम्हें! यह तुम रख लो और यह सिल्क की साड़ियां तुम्हें बहुत पसंद है ना! बाकी सारे सामान का दादी और पापा को जो करना है कर लेने दो!'

लहंगा देख कर मैंने कहा—'अब इसका क्या करूंगी? साड़ियां बहुत सुंदर है!'

—'अभी तुम इसको भी रखो! बाकी बाद में देखते हैं!' रोली लहंगा देकर चली गई। मगर मैं इस लहंगे को देखकर बहुत पीछे चली गई।

मेरी शादी का लहंगा, जो मुझे पहनना था, जिसकी मैचिंग की चूड़ियां और नकली गहने किराए से हम लेकर आए थे, वह मेरी ननद ने पहन लिया। मुझे ननद ने वरमाला से चार घंटे पहले बताया, अब तुम्हें लाल वाला नहीं, यह गुलाबी वाला सस्ता-सा लहंगा पहनना है। उसका मैचिंग मेरे पास कुछ भी नहीं था। मजबूरन मैंने अपनी ही एक लाल साड़ी पहनी थी।

शादी के समय किसी लड़की का लहंगा ही बदल दिया जाए, ऐसा तो शायद कभी नहीं होता होगा! हमारे घर से मेरे माता-पिता द्वारा दिए गए दहेज में कोई कमी

रहने के कारण मेरी ननद ने अपमान का बदला इस तरह लिया था। जो अनूठा था। जिसने मुझे इस घर में आने से पहले ही दहला दिया था।

आज शादी के इतने साल बाद लहंगे का क्या करना? रोली की बात को मैं कभी मना नहीं कर पाती तो मैंने लहंगा और साड़ी उठाकर अलमारी में रख दिये।

मेरे उपहारों ने हमारा घर भर दिया था। साथ ही मेरे सास और पति के मुंह भी बंद कर दिए थे। अगले तीन दिन लोगों से मिलते-मिलते कब बीत गए पता ही नहीं चला।

आज सुबह अंकल-आंटी की बहुत याद आ रही थी। इतने में फोन की घण्टी बजी, ये आंटी का फोन था। दिल के तार जुड़ें हो तो लाइन ऐसे ही मिल जाती है।

आज आंटी से बात करते-करते मेरे आँसू गिरने लगे। मैंने आंटी से कहा 'आज आपको मेरे पास होना था। आपकी कोई भी सेवा नहीं कर पाई। हमेशा आपसे लेती ही रही। मैंने दिया क्या?'

'अरे पागल, तू देने की हालत में थी ही कब? तू तो जीने की हालत में भी नहीं थी। तेरी हिम्मत देख कर कई बार तेरे अंकल कहते थे 'ये औरत है या एक साधु? इसके मन की ताकत बहुत बड़ी है। जो किसी आम इंसान में हो ही नहीं सकती है। लड़कियाँ पार्टी और गहनों के लिए जीना मुश्किल कर देती हैं। तुझे तो इन नालायकों ने पेट भर रोटी भी नहीं दी। अरमानों की बात करने का तो तुझे जिन्दगी ने वक्त ही नहीं दिया। इन हालात में जीना भी आसान नहीं होता है पर तूने तो रोली को सफल बनाया और आज तू बहुत ऊपर पहुँच गई। ये हमारी भी जीत है। अपने बच्चों की सफलता से बड़ा कुछ भी नहीं होता है बेटा!'

'आंटी, इस सबमें आपका हिस्सा बहुत बड़ा है। हम अकेले कुछ नहीं!'

'बेटा, तू भी हमारी स्वाति जैसी ही है। तेरी कल की सफलता और हिम्मत ने हमें कितना रुलाया।' कैसा जुड़ाव है? दोनों तरफ आँसू ही तो बह रहे थे।

शब्द अपना काम करना नहीं चाहते थे। वो आँखों के सागर में डूब गए थे। सागर के बाहर जीवन की जरूरतें मेरा इंतजार कर रही थी।

आंटी से बात पूरी हुई तो घर के कुछ काम निबटाये।

अचानक मुझे याद आया, अरे मुझे तो मन्दिर जाना है। ईश्वर से बात करनी है। उन्हें बहुत सारा धन्यवाद देना है। काकी से भी मिलना है। काकी को याद करते ही एक हूक सी उठी जिसे मैंने किसी तरह कोशिश कर दबा दिया।

सफलता के बाद

घर में रखे उपहारों में से एक सुंदर सी साड़ी उठाई और मैं मन्दिर गई। ईश्वर से आज कुछ न कह पाई। वो तो सब जानते हैं। अब उनसे मैं क्या कहती?

प्रभु,
मोती कैसा चाहते हो?
सागर से लाऊँ या आंखों से दे जाऊँ?

दोनों ही तुम्हारे हैं!
एक दर्द में, एक गहराई में,
एक हम सब के लिए अनमोल,
एक का किसी के लिए कुछ मोल!

दुनिया को बनाने वाले,
मुझे और सीप को रचने वाले,
तुम क्या देने पर पिघलते हो?
यह तो सब जानते हैं!
तुम को पाने के लिए सीपियों को क्यों छानतें हैं?
जानकर अनजान बनते हैं।

तुम को मोतियों से तौलते हैं।
किसी की आंख के आंसू उन्हें नहीं दिखते हैं।
फिर भी वो तुमसे आशीर्वाद मांगते हैं।

तुम चुप सदा मुस्कुराते हो।
मोतियों का फर्क और मोल,
सिर्फ तुम ही जानते हो।

मेरा हर एक दर्द, मेरा हर एक मरहम उनसे छुपा नहीं था। उन्होंने मेरी प्रार्थना सुनी थी। बस उसके लिए मैं हाथ जोड़कर उनके सामने खड़ी थी।

आज उन्होंने मुझे वो दिखा दिया जो मैंने सोचा भी नहीं था। मैं तो बस खर्चे के कुछ पैसे ही चाहती थी। उन्होंने तो हर अपमान का बदला एक सम्मान से दिलवा दिया।

मन्दिर से निकलकर काकी के घर गई। पंडितजी, काकी ने बहुत प्यार किया, बहुत दुआएँ दी। आज काकी की गोद में सर रखकर बहुत रोई। इस आँचल ने मेरा कितना साथ दिया। जिन्दगी ने कितने सुख, कितने दुख दिये, ये गिनने बैठूं तो सुखों का पलड़ा ही भारी होगा।

आज भी काकी ने मिठाई खिलाई। मुझे अब उस स्वाद की जरूरत नहीं थी। पर उनका प्यार, वो तो आज भी मेरी जरूरत था।

काकी बातों-बातों में कुछ बता दें जो मेरे कान सुनने को तरस रहे थे। उसका अब कोई मतलब तो नहीं था फिर भी इस दिल को कौन समझाए? काकी को क्या पता मेरे अंदर क्या चल रहा है। वो तो आज बहुत खुश थीं। मेरे सर पर हाथ रखकर उन दोनों ने मुझे ढेरों आशीर्वाद दिये।

दोपहर का खाना मुझे माँ के साथ ही खाना था। वो सुबह ही फोन कर चुकी थी। आज माँ-पापा बहुत प्रेम से मिले। उनके प्रेम के नीचे छुपा उनका सिसकता हुआ दर्द दिख रहा था। दोनों बेटों का छोड़कर जाना उन्हें खाली कर गया था।

'माँ, अपना और पापा का ध्यान रखो! खुश रहो! तुम्हारे दुखी होने से कुछ नहीं बदलेगा। इस उम्र में अपने स्वास्थ्य का ख्याल रखना सबसे बड़ी जरूरत है।

एक बार सोचो तुमको या पापा को कोई बीमारी हो गई तो कितनी परेशानियाँ उठानी होंगी? जो आज है, बहुत है! इसके साथ सन्तोष से जीना एक तरह की प्रगति ही है माँ! अचानक लगा मैं तो माँ की माँ हो गई हूँ।

मैंने हँसकर बातचीत का रुख बदला 'मैं भी तुमको क्या समझाने लगी? तुम तो बहुत अच्छी हो माँ!'

माँ की आँखों में आँसू आ गये वो बोली 'अच्छी होती तो अपनी बेटी का दर्द समझती। उसे कसाईयों के पास नहीं भेज देती। उस दिन तो मुझे आने वाली लक्ष्मी ही दिख रही थी। सच, हम सब अपने कर्मों का फल ही पाते हैं। जो इस समय

हमारे साथ हुआ हम उसी के हकदार हैं। किसी को दोष देना ठीक नहीं!' कहकर माँ ने अपने आँसू पोंछे।

मैंने माँ के ऊपर अपना हाथ रखा 'मुझे कोई शिकायत नहीं है।' मैं जो कहना चाहती थी। वह मेरे स्पर्श ने कहने की कोशिश की!

माँ ने आज डोसा-साँभर बनाया था। अपनी और पापा को थाली लगाते हुए मैंने माँ से पूछा 'तुम्हें तो ये सब चीजें बनाना नहीं आती थी। ये किससे सीखा?'

'अरे वो हमारे पास में विभा रहती है ना, वो तेरी क्लास में जाती थी। उसनें मुझे भी सीखा दिया।'

'अरे वाह, तुमनें सब बहुत बढ़िया बनाया है माँ!'

'विभा तो अब ये सब जेल की महिलाओं को सिखाने जाती है। ये सब उनके रोजगार का साधन होगा। अब तक जेल के पुरुषों के हाथ के बने सामान मेले में बिकते थे। अब महिलाएँ भी खाने-पीने के सामान बना कर दिया करेंगी।'

'ये तो बहुत अच्छा काम कर रही है वो। कितने लोग हैं जो लोगों की सहायता निष्काम भाव से करते हैं!'

'विभा कहती है 'तेरे हाथ जैसा खाना बनाना जिसने सीख लिया वो कभी भूखा नहीं रह सकता। कुछ न कुछ कमाई तो कर ही लेगा।'

सांभर को खाते-खाते, माँ से बात करते-करते मन बहुत पीछे चला गया। मेरे पति और सास मेरे हाथ का बना सांभर नहीं खाते थे। वो बाजार से लेकर आते थे।

डोसा, आलू, चटनी सब मेरे हाथ की पर 'सांभर मुझे बनाना नहीं आता है। वह उन दोनों से खाया नहीं जाता है।' किसी को नीचा दिखाने के कितने रास्ते हो सकते हैं, ये एक बीमार दिमाग ही बता सकता है।

'सरोज तू खाना खा रही है या कुछ सोचने लगी बेटा?'

'अरे कुछ नहीं माँ, ये सब तो रोली के लिए भी देना। अब घर जाकर उसे भी यही खिलाऊँगी। देखना वो तुमको फोन करेगी कि सब बहुत अच्छा बना है।' माँ को खुश रखना जरूरी लगा। उन्हें किसी भी बात से परेशान करना ठीक नहीं।

रात को जब घर आई तो मुझे अपनी सास की जिंदगी और सोच को देखकर एक ही बात मन में आई, कैसा जीवन जिया है इन्होंने? प्रेम के बिना जीवन जीना भी एक सजा ही तो है! इनको बहुत छोटी उम्र में ब्याह दिया गया था।

शादी के पाँच साल बाद पति के गुजर जाने पर एक विधवा को घर में कैसे कैद करके रखा गया, उनकी आज की सोच पर उसी की छाप है। उसी की प्रतिध्वनि है। वो पति के साथ नहीं रह पाईं तो उन्होंने बेटे को अपने से दूर नहीं होने दिया। जिस बेटे को आज तक पाला उसे किसी से बांटना उनके लिए सम्भव नहीं है।

दुःख में अपने आप को सम्हाल पाना आसान नहीं होता। यह अधिकतर एक बीमारी का रूप ले लेता है जो फिर दूसरों के जीवन को संक्रमित करता है।

इस संक्रमण से खुद को बचा पाना आसान नहीं। इसके लिए मन में एक प्रतिज्ञा चाहिए। फिर जीवन के रास्ते बदलने लगते हैं। नहीं तो यह आग पूरे जीवन को कालिमा दे जाती है।

ऐसा अधिकतर लोगों के जीवन में होता है। उन्हें कोई सताता है फिर वो किसी के साथ वही सब करते हैं जिससे वो गुजरे हैं। बहुत कम ही होते हैं जो दर्द से गुजरते हुए बीमार नहीं होते और अपने इलाज के रास्ते ढूंढ लेते हैं।

इन तीन दिनों में मैंने अपने भीतर एक यात्रा कर ली। एक बार फिर उन रास्तों से गुजरी जहाँ से होकर यहाँ तक आ सकी। एक सुकून, एक गर्व से भर गई। मैंने जो पाया वो ही नहीं किया अपना रास्ता ही बदल लिया।

आज चौथा दिन आ गया जब मुझे लद्दाख जाना है। रोली मुझे अपने साथ एयरपोर्ट तक छोड़ने आई। घर की शांति बनी रही। मैं चुपचाप अपनी अटैची लेकर घर से बाहर निकल गई।

प्यार से विदा किया जाये इसकी तो उम्मीद भी नहीं थी। शांति से बाहर निकल पाना किसी सम्मान से कम नहीं था।

रोशनी से जगमगाता एयरपोर्ट! जहाँ गाड़ियाँ आ-जा रही है। लोग अकेले या किसी के साथ चल रहें हैं। इतनी गहमागहमी देखकर मैंने रोली का हाथ कसकर पकड़ लिया। जिसमें छुपी बात वो मुझसे पहले समझ गई। हँसते हुए बोली—'डरो मत, सब ठीक होगा!' रोली मुझे जाते हुए देख रही थी।

मैं अपना टिकिट दरवाजे पर दिखा रही थी। अंदर की ओर कदम बढ़ते की पीछे से रोली की बहुत जोर से आवाज ने मुझे पलटने पर मजबूर किया।

डर कर पीछे देखा 'माँ-बाबूजी खड़े थे।' टिकिट चेक करने वाले सज्जन से कुछ

कहना नहीं पड़ा। उन्होंने मुस्कुराकर टिकिट वापस कर दिया। माँ ने मुझे बाहों में भर लिया। 'अरे माँ, बताया क्यों नहीं? बस एक पल का फासला रहा गया। नहीं तो हम नहीं मिल पाते।'

'सुबह तेरे बाबूजी ने कहा तो हम तैयार हो गये। चल मिलना तो हो ही गया ना!'

बाबूजी ने प्यार से सर पर हाथ रखते हुए कहा 'सरोज अपना ध्यान रखना बेटा! अब तू जा, तुझे देरी न हो जाये! रोली को छोड़ते हुए हम मन्दिर जायेंगे। आज वहाँ भंडारा है वो खा कर घर चले जायेंगे। आज हमारी शादी की सालगिरह है।' बाबूजी ने मुस्कुराते हुए कहा

'वाह! ये तो बहुत खुशी की बात है। आप दोनों ऐसे ही खुश रहना! लौट कर आती हूँ फिर मिलते है।' मैंने बाबूजी के कंधे को छू कर कहा और एक बार फिर जल्दी से आगे बढ़ गई।

इस बार मेरे प्यार की पोटली और भारी हो गई थी।

माँ...

नाना-नानी के साथ बाहर निकलते हुए मन बहुत खुश था। हम माँ को एयरपोर्ट से छोड़कर बाहर निकल रहे थे। मन अभी भी उसी के पास था। माँ की आँखों का डर, जैसे कोई बच्चा अपनी माँ से अलग हो रहा हो।

माँ मुझे कहती भी थी 'रोली, तू तो मेरी माँ है! उसका मासूम चेहरा याद करके आँखों में आँसू आ गए। एक औरत अपनी जिंदगी में कितना दर्द सहती है? उसके बाद भी उसके पास कुछ पल सम्मान के, अपनी खुशी के हों यह जरूरी नहीं।

थोड़ी देर बाद माँ का फोन आया 'रोली, सब कुछ ठीक से हो गया। तुम्हारी बात सही थी। पूछने से सारे काम हो जाते हैं।' माँ ने चहकते हुए कहा।

'तो अब खुश हो जाओ! आगे भी सब ठीक ही होगा!' मैंने माँ को हिम्मत देते हुए कहा।

'तुम भी अपना ध्यान रखना रोली' कहते-कहते माँ की आवाज भीग गई थी। जिसे हम दोनों ने समझ लिया। फोन हाथ में थे पर हम दोनों चुप थे। खामोशी वो सब कह रही थी जो हम कहना- सुनना चाहते थे।

मैंने ही उस खामोशी को तोड़ते हुए कहा 'तुम अब सब भूल जाओ! बस वो सब जी लेना जिसे तुम देखने जा रही हो।' फोन कट गए पर जो दिल एक बार जुड़ जाते हैं वो साथ ही धड़कते हैं।'

पहली यात्रा

एयरपोर्ट में अंदर जाते ही कुछ पूछते, कुछ पढ़ते हुए मैं अपनी एयर सर्विस के विंडो तक पहुंच ही गई। मैंने अपना बोर्डिंग पास लिया।

'क्या मैं खिड़की वाली सीट लेना चाहूँगी?' इस सवाल का मैंने खुशी से जवाब दिया 'जी जरूर!'

रोली से बात करके आगे बढ़ ही रही थी कि डॉ. देव दिख गये। एक आश्चर्य मिश्रित खुशी! आज वक्त ने वो दिखा जो मेरे मन में कहीं दबा पड़ा था। जिसके लिए मेरी धड़कन तेज हो जाती थी। मेरा मन कुछ माँगने लगता था। उसे देखकर बात करूं या नहीं यह सोच ही रही थी कि उन्होंने मुझे देख लिया।

मेरे पास आते ही बोले 'कैसी हो? अरे, उससे भी पहले बधाई! अकेली कहाँ जा रही हैं? मैं भी एकसाथ कितने सवाल कर बैठा। फ्लाइट में थोड़ा समय हो तो बैठकर बातें करें?'

उनके इतने सारे सवालों में से एक का ही जवाब दे पाई—'अभी दो घण्टे बाद लद्दाख की फ्लाइट है।'

'चलो तो वहाँ बैठकर कॉफी पीते हैं।' हम दोनों चुपचाप कॉफी शॉप की तरफ बढ़ गए।

कॉफी मेरे हाथ में देकर देव मेरे पास बैठ तो गए पर उनके अंदर के सवालों को मैं समझ रही थी। क्या बात करें? क्या पूछें यही सब हम दोनों के अंदर चल रहा था।

जिन्दगी भी बड़ी अजीब है। कब क्या दिखा दे कुछ पता नहीं! वो भी, वो जो हमारे मन की गहराई में कहाँ छुपा बैठा हो। हमें भी याद नहीं होता।

आपके पति में तो कुछ भी नहीं बदला, आज भी उनके साथ क्यों? अब तो आपको किसी सहारे की जरूरत नहीं है। फिर ये अपमान क्यों?

हमारा रिश्ता, जिसको हम कोई नाम तो न दे पाए पर देव इतना हक रखते थे कि वो मुझसे सीधा सवाल कर सकते हैं।

‘अपने काम और रोली की परवरिश में इतनी खो गई कि खुद के बारे में सोचना ही भूल चुकी थी। वो तो उस दिन मंच पर पता नहीं कहाँ से वो सब बोल गई।’

‘जो आपने कहा वो बहुत बड़ा सच था जिसे कहने की हिम्मत और चाहत बहुत कम लोगों में ही होती है।’

रोली की बीमारी के समय का साथ मेरी वैवाहिक जिन्दगी के वो सब सच खोल गया था जो मैं शायद कभी भी किसी से नहीं कह पाती।

‘अब क्या?’ ये सवाल पूछते-पूछते वो मेरी आँखों में गहरे तक देखने लगे। जैसे जवाब मैं नहीं मेरी आँखें ही दे देंगी जिसे वो पढ़ भी लेंगे।

एक बार फिर मेरी आँखें धुँधला गई। जिनको छुपाने की कोशिश की तो वो बह गई। किसी तरह अपने आँसुओ को रोका और अपनी बात कहनी शुरू की—‘रोली के ठीक होने के बाद आपको देखने की बहुत इच्छा होती थी। घर किसी काम से निकलती तो अस्पताल में आती थी। ठीक दस बजे! जब आप अस्पताल में दाखिल होते थे। वो कुछ सेकेंड के लिए आपको देख लेने का चैन कुछ ऐसा ही था, जैसे तपते रेगिस्तान में मीलों चलने के बाद पानी मिल जाये। आज याद करती हूँ तो अपने पर हँसी आती है।’

आज लगा, देव को वो बता दूँ जो मेरे अंदर चल रहा था। जिसे मैंने बड़ी मुश्किल से काबू में किया था। एक बार भी मन में यह बात नहीं आई कि मैं ये सब क्यों कह रही हूँ या अब इसका क्या मतलब है? जिंदगी में सब वही होना चाहिए क्या जिसका कोई मतलब हो?

यहाँ बिना मतलब के जो मिल जाता है, सच कहें तो सिर्फ वही जीवन के मतलब का होता है। एक पल पूरे जीवन का प्यार दे सकता है। कुछ अहसास हर साँस के साथ जीते हैं। वही बेमतलब के पल इस जीवन की गाड़ी को ऊर्जा देते हैं।

जो अपने स्वार्थ के लिए इस्तेमाल करके मन को तार-तार कर देते हैं, उस मन को जोड़े रखने का काम यही पल कर जाते हैं। पाँव के छालों की जलन को कम कर देते हैं। चलने की एक नई ताकत भर देते हैं।

देव की आवाज से मैं अपने आप से बाहर आई।

‘यह हँसने की नहीं, एक इंसान के अकेलेपन की, उसके दर्द की जरूरत थी।

वह मुझे हर मुलाकात में समझ में आती थी। मगर मैं सीधे से कुछ कहकर आपको परेशान नहीं कर सकता था। आपको देखकर यही लगता था कि आपने एक इंसान को मार दिया है। आपमें सिर्फ एक माँ ही जिंदा है। सब कुछ बहुत साफ दिखता था।’ कहकर देव ने अपनी एक बाँह मेरे कँधे पर रख दी।

देव ने मेरे हाथों पर अपना हाथ रख दिया। पहली बार इस इंसान ने मुझे छुआ, जो कभी मेरे मन को भिगो गया था। आज उसका स्पर्श ऐसा लगा कि उठकर उसके गले लगकर वो सारे आँसू बहा दूँ जो आज तक मैंने सम्हाल कर रखे थे।

कितनी देर तक मेरे आँसू गिरते रहे और वो मेरे हाथों पर अपना हाथ रखकर खामोशी से वो सब जो कह रहे थे मैं सुन पा रही थी।

बड़ी मुश्किल से अपने आप को रोका। जब आँसू थमे तो मैंने कहा ‘अस्पताल में आपको देखने आने का सिलसिला रोकना पड़ा। मुझे लगा यदि यही सब चलता रहा तो मैं अपने आपको नहीं सम्हाल पाऊँगी। एक बारह साल की बेटी की माँ, एक अविवाहित डॉक्टर से क्या और क्यों उम्मीद कर रही है?

साथ ही मेरी कुकिंग क्लास, टिफिन सेंटर का काम चलने लगा। रोली और मैं अपने-अपने काम में व्यस्त हो गए। रोली की पढ़ाई मेरे मन को बहुत शांति देती थी।

आज रोली अपनी इंटर्नशिप के लिए हैदराबाद जा रही है। हम दोनों को एक ही दिन शहर छोड़ना है। उस दिन से लेकर आजतक आपसे मिलने की बात को समझने वाला यह तय करने वाला, दुनिया को बनाने वाला रचयिता ही हो सकता है। सारे संयोग उसी ने मिलाये हैं। ये काम कोई और कर भी नहीं सकता है।

मैं पहली बार अकेले वहाँ जा रही हूँ, जहाँ जाने का ख्वाब मेरे मन में था। अब रोली की जिम्मेदारी लगभग पूरी ही हो गई है। रोली से मुझे जो मिला वो मेरा मन भर गया है। अपने बारे में फिर कभी सोचा ही नहीं।

‘मन एक माँ का भरा है एक इंसान का नहीं! किसी का साथ सुकून से सके, यह सबकी जरूरत होती है! आपने इस फर्क को समझने की कोशिश नहीं की। वैसे जानते हम सब कुछ हैं। समझते नहीं है या चाहते नहीं’ देव ने वो बात कह दी जो सच था।

मैं कुछ जवाब न दे पाई।

बात का रुख बदलते हुए देव ने कहा—'मेरी पोस्टिंग ऊधमपुर में हो गई है। मैंने आर्मी जॉइन कर ली है। अभी भी शादी नहीं की है। मेरे पापा, जिनकी बीमारी के कारण मैं शहर में रुक गया था, अब बिल्कुल ठीक हो गए हैं।'

'यह सब सुनकर मुझे बहुत अच्छा लग रहा है। आज जब नालायक बेटों के कारण माता-पिता वृद्धाश्रम जाने लगे हैं। वहाँ ऐसा बेटा भी है जो अपने से ज्यादा अपने माता-पिता के बारे में सोचता है।

आप जैसे शानदार इंसान से मिलना मेरा सौभाग्य है। हमारे बीच रिश्ते क्या बने? हम फिर मिल पाए या नहीं, इससे ज्यादा ये महत्वपूर्ण है कि जीवन की इन पगडंडियों पर वो मिल जाये जो हर पल याद रहे, जिसकी यादों से जीवन महक जाए।

आँखों में याचना लेकर जीना मुझें पसन्द नहीं है। कमी तो बहुतों के जीवन में होती है। वो फकीर अच्छा है जिसकी आँखें तृप्त हैं। अपनी बात को लगाम देते हुए मैं हैरानी से सोचने लगी कि देव ने अभी तक शादी क्यों नहीं की? सवाल कब निकल गया पता ही नहीं चला।

'नहीं!' एक सपाट से जवाब ने मुझे हिला दिया।

'क्यों, अभी तक? क्या मतलब है इसका?' एक साथ कई दर्द सिसक उठे।

एक सोलह साल की बेटी की माँ के लिए? मन में आवाज उठी। 'आप, कौन से युग के इंसान है?' मेरे मुँह से निकल गया।

'यही बात मेरी माँ भी कहती है। हर सवाल का जवाब जरूरी नहीं है। इसका जवाब तो मैं भी नहीं जानता। हाँ, इतना जरूर समझ सकता हूँ कि शादी कोई ऐसा जरूरी काम नहीं है जो सब करें।

बेजान शादियों के परिणाम इस दुनिया में कितने लोग भुगत रहें हैं। उनके सबसे गन्दे परिणाम बच्चे भोगते है। शादी तब ही की जाए जब किसी के साथ हर पल, जीने की ख्वाहिश हो।' देव ने अपनी स्पष्ट सोच को बता दिया। जो सही भी था।

'इस सच से तो मैं भी सहमत हूँ। हमारी नींद ही हमारी जिंदगी के दुखों का कारण है। हम अपने दर्द से बाहर तब ही निकल सकते हैं जब हमें यह अहसास हो कि हम तकलीफ में हैं। मैंने शादी के बाद ही यह समझा कि मेरी हालत कैसी है और मुझे क्या करना है? शादी दूसरों के कहने से नहीं होनी चाहिये। पर एक बेरोजगार लड़की यह निर्णय नहीं ले सकती है।

उससे पहले तो मैं 'जैसा माता-पिता चाहें' उसी तक सीमित थी। मुझें अपने आप से एक सन्तोष जरूर है कि जब मैंने चलना शुरू किया तो वक्त ने मेरा हाथ थामा।'

अचानक अनाउंसमेंट की आवाज पर ध्यान गया तो मैने देव से कहा—'मेरी फ्लाइट का समय हो गया है।' कहकर मैं इस खूबसूरत दायरे से अपने को बाहर ले आई। कुछ लम्हें एक युग जितना सुकून क्यों दे जाते है? इस सवाल का जवाब वो हर इंसान शब्दों में बयान तो नहीं कर पायेगा जिसने इन्हें जिया है। पर उसकी मुस्कुराहट हर सवाल का जवाब बन सकती है।

'मेरी भी।' कहकर देव ने मेरा भी बेग अपने हाथ से आगे बढ़ाया और हम सिक्युरिटी गेट की तरफ बढ़ गये।

आज अचानक याद आ गया जब रोली छोटी थी तो एक हाथ में रोली, कँधे पर एक बैग और हाथ में अटैची लिये मैं कैसे चलती थी? कभी ख्याल भी नहीं आया कि इनमें से कुछ पति भी उठा सकते थे।

तब मेरे जेहन में एक ही बात होती थी कि ये किसी बात पर चिल्ला न पड़ें। सब ठीक-ठाक हो जाये बस इतना ही सोच पाती थी।

आज अचानक, चलते-चलते यूँ ही कोई...

अब हमारे रास्ते अलग थे। जीवन में रास्ते किसी को कहीं भी ले जायें, क्या फर्क पड़ता है? मिलन तो दिलों का होता है, और जिनके दिल मिल जायें, उनके लिए रास्तों का क्या महत्व है?

देव से हाथ मिलाकर विदा होना ऐसा लगा जैसे जीवन में सबकुछ मिल गया। एक पूर्णता के अहसास से मैं भर गई। आजतक मेरे अंदर एक माँ ही ज्यादा जीती थी। इस पल से एक इंसान, एक औरत भी जी गयी।

विमान के अंदर जाते समय मेरी चाल में जो अहसास था उसे किसी भी शब्द से समझाना असंभव था।

जमीन पर एक रोली से दूर होने का ही दर्द था। कुछ ही मिनटों के बाद लद्दाख की पहाड़ियां दिखने लगीं। प्रकृति! ईश्वर का इंसान को मिला एक अनुपम उपहार! हर पर्वत इतना सुंदर, विशाल और अद्‌भुत लग रहा था कि जैसे प्रकृति ने हर एक को अपने हाथों से सँवारा हो।

लद्दाख

पहले चट्टानों के विविध रंगों से सजे पर्वत दिख रहे थे। फिर बर्फ के पहाड़! उफ्फ, इस नैसर्गिक सौंदर्य का कैसे बखान करूँ? बर्फ के पर्वत तो ऐसे लग रहे थे जैसे किसी ने इन पर आइसिंग शुगर लगा कर इन्हें सजा दिया हो।

अब तो शहर के मकान, मोनेस्टिघ्स और संगम दिखाई दे रहे थे। इतने ऊपर से नदी एक महीन लकीर जैसी ही दिख रही थी। जिसका रंग हरे काँच जैसा था। उस बालू की जमीन पर वह ऐसे लग रही थी जैसे किसी ने हाथ से एक सुंदर घुमाव दे कर उस जमीन पर नदी बना दी हो।

न जाने कितने सालों से चाहती थी, इन पर्वतों से बात करना! जीवन को बड़े कैनवास पर देखो तो हम खुद बहुत छोटे हो जाते हैं और हमसे विशाल और सुंदर दूसरी कई चीजें नजर आती हैं।

लेह एयरपोर्ट से बाहर निकलते हुए मैंने देखा कि मेरे नाम की तख्ती के साथ कोई मुझे लेने के लिए खड़ा था। होटल में रिसेप्शन पर लद्दाखी मफलर के साथ फूलों से मेरा स्वागत हुआ।

सबको धन्यवाद देकर अपने कमरे में जा ही रही थी कि एक वेटर ने बड़े प्यार से 'जुले' नमस्ते कहा। मैंने भी मुस्कुराते हुए 'जुले' कहा और आगे बढ़ गई।

कमरे के अंदर जाकर सबसे पहले मेरी निगाह बड़ी सी खिड़की की ओर गई। सामने नीला साफ आकाश, जैसे किसी ने अभी ही आकाश को साफ करके सामने ला दिया। नीचे विशाल पर्वत उनको देखकर तो ऐसा लगा जैसे वो मुझसे बातें करने का इंतजार ही कर रहे थे।

वहीं खिड़की के पास रखी कुर्सी पर बैठ गई। शब्द मेरे ऊपर बरसने लगे। मैंने आज तक जब भी लिखा मन में कुछ उमड़ने लगता था। एक बहाव मुझसे कुछ लिखवा लेता था। आज तो मेरे ऊपर बारिश सी होने लगी।

वक्त! इससे बड़ा कुछ भी नहीं है। जीवन का हर पल इसी में समाया है। इससे बाहर तो जीवन ही खत्म हो जाएगा। तो फिर अहसास किस काम के?

वह सुनता है साथ ही सुनाता भी है। कुछ इस तरह मैं वक्त की महक को महसूस कर सकती हूँ। उसके होने के अहसास से खुद को भर सकती हूँ।

वो मेरे साथ ही है, मैं उसके काँधे पर सर रख
सकती हूँ, उसकी बाहों में जीती हूँ...
तू मुझ में धड़कता है तभी तो मेरा जीवन चलता है।
आँखों के रास्ते, दिल के दरवाजे से,
कभी कुछ कहता, कभी कुछ दिखाता है।
तू मुझमें जीता है तभी तो...
खुशियों को दिखाता, दर्द से मिलवाता रहता है।
कभी मुस्कान, कभी आँसू दे जाता है।
तू मेरा हाथ थामे रहता है तभी तो...
कोई थामता, कोई गिरा देता है।
कभी ऊँचे तो कभी नीचे रास्तों से मिलवाता है।
तू मेरे संग ही सब देखता, समझता रहता है तभी तो...
आज दुआओं में तो कल बद्दुआओं में करवट लेता रहता है।
कभी आकाश तो कभी पाताल में ले जाता है।
तू खुली बाहों से हर पल का स्वागत करता है तभी तो...

तालियों की गड़गड़ाहट हो, चीखते सन्नाटे हो,
कभी फूलों पे तो कभी कांटों में जीना सिखाता है।
तू हर पल गुनगुनाता रहता है तभी तो...
तेरी बाहों में जीती हूँ, तेरे काँधे पर रोती हूँ,
तू मेरी हर साँस को समझता है।
तू हर हाल में मुझे थामे रहता है तभी तो...
जो दिखाये देख लेती हूँ, कोरे पन्ने सा जीवन जीती हूँ,
तू क्या लिख दे नहीं जानती हूँ?
अपनी हथेलियाँ तेरे हाथों पे रख देती हूँ।
तू लकीरों का मतलब समझाता रहता है, तभी तो...
तेरे बिना कैसे जी पाऊँगी?
तेरे बिना कैसे चल पाऊँगी?

तू है तो ये दिल धड़कता है!
मुझे तू मेरा सबकुछ लगता है! तभी तो...
जिसने मुझे पाला,
सींचा है वो तन्हा है,
पर मेरी आँखों में बसा रहता है!
तू है तो देख पाती हूँ,
नहीं तो बेनाम हो जाऊँगी।
छुत के नियमों में बंध जाऊँगी।
वक्त की साँसे हैं,
वक्त की आँखे हैं,
वक्त है, तो अहसास है।
तू है तो मैं हूँ।
नहीं तो कैसे जी पाऊँगी?
तुझे हर जगह पाती हूँ,
तेरी धड़कन को महसूस कर सकती हूँ।
कभी पर्वत जैसा अटल,
कभी बादल जैसा चंचल,
कभी फूलों सा खिलता,
कभी जुगनुओं सा चमकता,

कभी बयार सा गुदगुदाता,
कभी ओस सा झिलमिलाता,
कभी सागर सा गहरा,
कभी तारों सा ऊँचा,
कभी फूलों से सहलाता,
कभी ठोकर मार कुछ कहता,
तू हर पाठ पढ़ाता है।
तू हर सबक सिखाता है।
जो तुझमें जीता है,
वो कभी तन्हा नहीं हो सकता है।
जो था, जो है और जो रहेगा!

जिसे दुनिया वक्त कहती है!
जिसके दामन में हर दास्तां छुपी रहती है।
जो हर साँस की गवाही दे सकता है।
जो पत्थर और पेड़ों से भी बातें कर सकता है।
मैं ऐसे साथी से प्यार करती हूँ।

वक्त से बड़ा किसी को नहीं समझतीं हूँ।
उसने सम्हाला, उसने पाला,
कभी हँसाया, कभी रुलाया,
पर उसने हमेशा मुझे अपनी आँखों में बसाया है।
वक्त के प्यार में गजल लिख सकती हूँ।
उसकी धुन पर थिरक सकती हूँ।
जो मुझमें रंग भरता है।
उसे क्या मैं कुछ अहसास नहीं दे सकती हूँ?
वक्त की स्याही से जो किस्से लिखे जाते हैं,
वो कभी नहीं मरते,
वो तारे बन जाते हैं।
वक्त बादशाहों का बादशाह है!
जिसने उससे प्यार किया है,
उसने वक्त की दीवार पर अपना नाम लिखा है।

वो राम के साथ भटका था!
वो सीता के संग समा गया था!
वो कृष्ण के संग नाचा था!
वो राधा के संग मुस्कुराता था!
वो मीरा के संग मूरत में गुम हो गया था।
वो गोपियों के संग भी थिरका था।
वो हर धुन में समाया था।
वो छोटा बड़ा नहीं जानता है।
वो सबमें समाया,
सबको अपना मानता है।

उसनें शिव के संग विष पीया था!
उसनें बुद्ध के मौन को सुना था!
उसनें महावीर की आँखों को पढ़ा था!
वो कबीर के संग गुनगुनाता था!
वो नानक के संग डूब गया था!

वो मजनूं के संग मर कर जी गया था!
वो लैला के संग सिसका उठा था!
वो वीरों की सफलता के गीत गाता था।
पर सुदामा की दोस्ती को नहीं भूल पाया था।
जो इतिहास को याद रखतें हैं,
वो वक्त से जीत जाते हैं।
वक्त उनकी रफ्तार को तेज कर जाता है।
कम में ज्यादा का अहसास हो जाता है।
ये गीत कभी पूरा नहीं हो पायेगा,
मेरी सांसों के बाद भी गाया जायेगा।
मेरे जैसे आते और जाते रहतें हैं।
वक्त की बाँह कुछ देर पकड़ते फिर बिछुड़ते हैं।
जो किस्से पूरे हो जाते हैं,
वो भुला दिए जाते हैं।
जो अधूरे छूट जाते हैं,
वो रातों को महकाते हैं।
एक कसक के साथ फिर जन्म लेते हैं,
वक्त का हाथ पकड़ फिर डगमगाते है।
नन्हे कदमों के संग जीवन के फासले तय करते जाते हैं।
ये दास्ताँ अधूरी है,
पर जो हर लम्हा पूरा जीता है।
वो यहाँ वापस नहीं आता है।
समझो तो जो अधूरा है, वो भी पूरा ही है।
एक पल से बड़ा तो कुछ भी नहीं है।
एक पल में निगाहें मिल जाती हैं।

कभी दिल में उतर जाती हैं।
एक पल ही सरताज बना देता है।
कभी धूल में भी मिला देता है।
एक पल में कोई जी जाता है।
सौ जन्मों सा चौन पा जाता है।
एक पल में मन मर जाता है।

साँसे चलती पर सब रुक जाता है।
कभी कोई मर कर भी अमर हो जाता है।
इस एक पल में सदियाँ छिपी हैं।
न जाने कितने अफसाने,
कितने आहें दबी हैं।
किसी की खिलखिलाहट,
किसी की खामोशी गूँजती है।
एक पल में ही ये दुनिया सजी है।
एक पल में बिखर भी जायेगी।
वक्त के आगे किसी की न चल पायेगी।
कोई सदियों तक भटकते हैं।
कोई एक पल में ही सदियाँ जी लेते हैं।
जो वक्त की कीमत जानते हैं,
वो इतिहास को नहीं दोहराते हैं।
बिखरे पन्नों से सब सीख जाते है।

वक्त के साथ अपने किले भी बनाते हैं।
वो वक्त से आगे निकल जाते हैं।
वक्त उनकी पीठ पर अपना हाथ रखता है।
उनके पीछे चलकर भी गर्व से भर जाता है।
उसका साथ जिसनें पाया है।
उसकी सफलता की गूँज सदियों में बसी है।
तालियों के गड़गड़ाहट में हर दास्ताँ छिपी है।
जिसे कर्म की प्यास है,

उसकी आत्मा अपनी धुन में रमी है।
वक्त उनके पास बैठ जाता है।
उनकी सुनता,
उन्हें आसमां तक ले जाता है।
वक्त ही हमें ऊपर उठाता,
हमारे गीत गाता है।
दुनिया जिनके लिए आँसू बहाती है।
उन्हें वक्त ने सँवारा है।
उनके समर्पण को समझ,
उन्हें अमर बनाया है।
जो वक्त की कीमत नहीं जानते हैं।
वो अपना घर नहीं बना पाते है।
खाली हाथ आये खाली ही जाते हैं।
वक्त देर-सवेर नहीं जानता है।
जब उठे,
जब चलें,
तब ही जाग जाता है।
वो सिर्फ दिल की आवाज सुन पाता है।
वक्त अधूरे सपने देख लेता है।
अनकहे अल्फाज सुन लेता है।
कभी दामन भरता,
कभी तन्हा कर जाता है।
आरती के दिये को,
धुप की महक को,
मन्दिर की घण्टियों को,
मस्जिद की अजान को,
अरदास की गूँज को भी वो सुनता है।
किले की दीवारों में,
महल के झरोखें में,
रेत के पहाड़ हों,
या बर्फ की दीवार हो,

वो हर पल की गवाही दे सकता है।
आँसू और मुस्कुराहट दोनों को देखता है,
हरदम एक ही बात कहता है:
यहाँ कुछ नहीं टिका,
ये भी बीत जायेगा,
तू जी ऐ दिल,
वक्त तेरा भी आयेगा।
हम कभी दर्द सह नहीं पाते
आँसुओं में डूब जाते हैं।
वो उसको भी देखता है।
लगन सच्ची हो,
तो वो उस दरिया में से भी सागर की राह बना देता है।
मंजिल से पहले हाथ नहीं छोड़ता है।
सागर से गहरा कुछ भी नहीं,
उससे मिलने के बाद कहीं जाना भी नहीं।
कुछ पल जो सागर के पास हम बिताते हैं।
लहरों को सुनते,
उसे अपनी बात बताते हैं।
एक अजीब सी तृप्ति से भर जाते हैं।
खारे पानी से हम अपनी प्यास बुझा पाते है।
जो आँखों में बसता है।
जब वो बाहर भी मिल जाता है।
जीवन उससे जुड़ कर अनन्त हो जाता है।
जो शब्दों की माला बना सकते हैं।
जो उनको हीरे सा चमका सकते हैं।
उनके गीत हो या किस्से,
वक्त अपने गले में पहन लेता है।
उन्हें कभी गिरने नहीं देता,
उन्हें कभी मुरझाने नहीं देता है।
उनका अहसास हर पीढ़ी को होता है।
जो वक्त के माथे पर चढ़ गया,

वो बिना ताज का सरताज हो गया।
उसकी आँखों में सागर दिखता है,
उनकी आँखों से नदियाँ से नीर बहता है।
उसके नाम अलग-अलग है।
वो शेर सा दहाड़ता है।
वो गिरगिट सा रंग बदलता है।
उसके सुर कोयल से लगते हैं।
उसकी चाल हंस सी दिखती है।
वो खरगोश सा दौड़ता है।
वो कछुए सा चल जीत जाता है।
उसका पैर गज जैसा भारी है।
उसके अहसास पँख से भी हल्के हैं।
वो मोर सा नाचता है।
वो नदियाँ सा बहता है।
वो सागर सा गहरा है।
वो पर्वत सा अटल है।
वो नभ को छू सकता है।
उसके सितारे कभी डूबे नहीं,
जिनके तारे कभी चमके नहीं।
जितने तारे आसमान में चमकते हैं,
उतने वक्त के दामन में जड़े हैं।
ये जगत वक्त में समाया है।
एक इंसान में पूरा जगत जीता है।
ये जगत इंसान में रहता है।
एक में दो रूप सा दिखता है।

कितने किले ढह गये!
कितने महल वीरानों में बदल गए!
कितने डेरे बसे?
कितने उजड़ गए?
इन सबका हिसाब रखता है

वक्त कुछ कहता नहीं फिर भी,
किस्से सुनाता रहता है।
जो घाटियों में गूँजते है।
जो आकाश को चीर देते हैं।
ऐसे अफसाने से वक्त का आँचल भरा है।
हर तारे में एक लम्हा छिपा है।
हम सबकी यादों से ये आसमां सजा है।
तारे बनते और टूटते रहेंगे,
किस्से बनते और बिगड़ते रहेंगे।
अरमानों की बातें की जाती रहेंगी,
दिल के अफसानों से वक्त की झोली भरी है।
फूलों की महक,
तारों की चमक,
से ये जगत बना है।
वक्त इन सबका गवाह बना और बनता रहेगा...
हम उसकी उंगली थामे या नहीं,
वो हमारे साथ चलता है,
चलता रहेगा...

हवा का झोंका मुझे सिरहन दे गया। दूर घरों की रोशनी में अब सिर्फ पर्वतों की एक गहरी आकृति ही दिखाई दे रही थी।

रोली और देव की बहुत याद आ रही थी। पर उस याद में अब तड़फ नहीं थी। एक पूर्णता का अहसास था। प्रेम के अहसास सबके अलग-अलग होते होंगे। मैं आज अपने आप को पूर्ण महसूस कर रही थी।

प्रेम उस पल ही पनप गया, उसने मंजिल पा ली जब यह चाहत दोनों के दिल में एक सी है, यह बात पता चल जाये। पाना क्या है? पाना तो एक सांसारिक क्रिया है। आँखों ने जो पी लिया, कानों ने जो सुन लिया वो पल अमर हो गया।

'उस पल से बड़ा कुछ भी नहीं। उससे ज्यादा किसी को मिलता भी नहीं!' यही तो एक अहसास था जिसके कारण लैला जी गई। उसका कभी मजनूं से मिलन नहीं हो सका। जमाना दर्द ही देता रहा पर वो दोनों एक अनजानी राह पर कभी जुदा न होने के लिए मिल गए, अमर हो गये।

इस पहले कदम के उजाले में आज मेरी जिंदगी बहुत सुकून पा गई। वक्त ने मुझे वो दे दिया जो सिर्फ वो ही जानता था। जो मैंने कभी उससे भी नहीं कहा था।

वक्त जिसे प्यार कर दे वो कभी तन्हा मर नहीं सकता है। वो वक्त की बाहों में जीता, उसी में मरता है... यहाँ मिट्टी से पैदा हुआ जिस्म मिट्टी में ही तो बदलना है। किसी को कहीं नहीं जाना है।

हम सब यहाँ हैं और यहीं रहेंगे! आसपास ही कहीं घण्टियों की आवाज गूँज रही थी। सड़क पर आते-जाते लोग उन घण्टियों को बजाते हुए आगे बढ़ते हैं। वो मन में दोहराते होंगे 'नाम यो हो रेंगे क्यो...' ईश्वर की ऊर्जा हम पर बरसे हम इस जीवन को खिले हुए कमल की तरह जीयें, दुखों के साथ पर उनसे ऊपर...

रात के आगोश में मुझे आज जो सुकून मिला वो अनूठा था।

लद्दाख की सुबह, इतनी ताजी, हल्की और खुशनुमा लग रही थी कि उसे शब्दों में बयान करना थोड़ा मुश्किल ही होगा। अब हम हवा की ताजगी को लिखकर कैसे बता सकते हैं? सामने धुले हुए बादल, आकाश, पर्वत सब एकदम नये, मुस्कुराते हुए लग रहे थे।

हमारे होटल के पास की जमीन पर किसी का खेत था। सुबह-सुबह किसान खेत में बुवाई कर रहा था। किसान हल चला रहा था। वो हल में वहाँ का बहुत ताकतवर चौपाया याक को जोतते हैं। साथ में एक महिला लद्दाखी वस्त्र पहने साथ में चल रही थी। उसने एक लंबा कोट जैसा कुछ पहन रखा था। उसकी जेब में से वो बीज बिखेरती जा रही थी।

इस जगह जहाँ हमें चलने में भी थकान लगती है। वो पुरुष कोई गीत गा रहा था। बहुत ऊँचे, मीठे स्वर में। मुझे लगा प्रकृति ही मुझे ये गीत सुना रही है। मेरा स्वागत कर रही है। दो इंसानों का साथ कितना मधुर हो सकता है? मेहनत के साथ, बुनियादी सुविधाओं के साथ भी जीवन कितना मधुर हो सकता है?

लद्दाख में ऑक्सीजन की कमी के कारण पहला दिन आसपास में ही घूमने की सलाह दी जाती है। यहाँ से भी ज्यादा ऊंचाई पर जाने पर साँस लेने में तकलीफ

हो सकती है। होटल के स्टाफ ने मुझे यहाँ के बारे में जानकारी दी। लेह में कई दर्शनीय स्थल हैं।

आज, मैं नाश्ता करके पैदल ही घूमने निकली। सोचा आगे कोई दर्शनीय स्थल देखने जाना चाहूँगी तो चली जाऊँगी।

अपने होटल से पैदल बाहर निकल कर इन पतली सड़कों पर चलना अच्छा लग रहा था। प्रकृति का साथ कितना हसीन हो सकता है। चारों तरफ पर्वत या पेड़ दिख रहें हैं। हम शहरों में रहने वाले लोगों को यह सुकून कितना जरूरी है! ठंडी हवा, गुनगुनी धूप में अकेले चलने का सुखद अहसास मेरे तन-मन को एक नयी ऊर्जा से भर रहा था।

पहाड़ी लोगों की आंखों में हम अनजान पर्यटकों के लिए एक अजीब सा स्नेह, स्वागत दिखता है। जो बहुत अच्छा लग रहा था। वो रास्ता बताने को यह कुछ भी समझाने को तत्पर रहते हैं। हर घर के बाहर बहुत सारे पेड़, पीछे पृष्ठ भूमि में पर्वत, मेरे साथ चलते बादल। इससे ज्यादा हमारी क्या जरूरत हो सकती है?

मुझे प्रकृति से बातें करना बहुत अच्छा लगता है। मैं ऐसे ही बातें करते-करते बाजार में आ गई। सड़क के दोनों तरफ खाने-पीने की दुकानें, साथ ही हाथ से बुने ऊनी सामान, लद्दाख की मोनेस्ट्रिज़ की सुंदर पेंटिंग और भी न जाने क्या-क्या दिख रहा था। कश्मीरी सामान भी यहाँ के बाजार में था।

आगे चौक में चारों तरफ दुकानें थीं। बीच में बैठने के लिए लम्बी बेंचें लगी हुई थी। एक बेंच पर बैठ कर मैं आराम से आते-जाते लोगों को देख रही थी। ये भी कितना सुकून भरा समय है।

कहीं जानें कि जल्दी नहीं, कोई काम नहीं, कोई आवाज नहीं, कोई दखल नहीं। यहाँ सिर्फ हम हैं, अपनी पूरी शांति के साथ। ये शांति हममें कितनी ताकत भर देती है। यहाँ बैठे-बैठे मैंने निर्णय लिया, अब मैं साल में एक या दो बार ऐसे ही यात्रा जरूर करूँगी।

मैं अपने ख्यालों में खोई खुद से बातें कर रही थी। मेरे सामने दो युवतियाँ आईं। मुझसे मुस्कुराकर 'हैलो' कहा। मैंने भी जवाब में 'हैलो' कहा।

उन्होंने मुझे बताया कि वो मेरे ही होटल में ठहरी हुई हैं। मेरे पास वाले कमरे में। वो दोनों वियतनाम से यहाँ आईं हैं। कल का उनका घूमने का प्रोग्राम उन्होंने मुझे बताया। साथ ही यह भी कि यदि मैं चाहूँ तो उनके साथ घूमने जा सकती हूँ। हम तीनों ने मिलकर कल के लिए टैक्सी बुक की।

लौटते समय हम तीनों साथ थे। भाषा के थोड़े से सहारे से भी रिश्ते बन जाते हैं। जिनमें कम बात किये भी काम चल जाता है। हम जो एक दूसरे की भाषा समझते हैं, क्या एक दूसरे को समझ पाते हैं? यदि इसका जवाब हाँ होता तो पूरी दुनिया के आधे झगड़े खत्म हो गए होते।

रात का खाना होटल के डायनिंग हॉल में खाकर कमरे में आई। रोली को फोन लगाया। पर लाइन नहीं मिल पाई। लद्दाख में सुरक्षा कारणों से मोबाईल के नेटवर्क की थोड़ी परेशानी है। उसे एक सन्देश देकर मैंने अपना फोन रखा और कमरे की बत्ती बन्द की। सुबह जल्दी उठना है। हर दिन का पूरा उपयोग करना है तो पहाड़ों पर घूमने के लिए जल्दी निकलना ही ठीक होता है।

सुबह सबसे पहले अपना फोन देखा—उसमें रोली का सन्देश था। जिसे पढ़कर आँखे नम हो गई। 'Hi beautiful, enjoy each and every moment, I love you! I'm fine here'

अगली सुबह मेरे दोनों साथी मेरा इंतजार करते हुए मिले। हमनें साथ में नाश्ता किया और हम टैक्सी में बैठ निकल पड़े अपने पहले गंतव्य की ओर।

बुद्ध की मोनेस्ट्री कला, आस्था का एक अनुपम उदाहरण है। चटकीले रंगों से बनी खूबसूरत पेंटिंग, बुद्ध की प्रतिमा को भी बहुत सुंदर रंगों से सजाया था। उनके आसपास की दीवारें बहुत अच्छी लग रही थी। दीये की अखण्ड जोत ईश्वर से एक कामना ही होगी, दिल में प्रेम, विश्वास को जलाये रखने की।

मन्दिर मेरी नजर में एक जगह है, खुद से बात करने की, अपने आपको देखने,

समझने की। जितना हम खुद को जानते है उतना ही अपने करीब होते जाते हैं। एक नयी ताकत महसूस करते हैं।

लद्दाख के रास्ते, वहाँ की मोनेस्ट्री से शहर का नजारा ये सब बहुत अद्‌भुत है। मेरे जैसे कईं होंगे जिनके लिये प्रकृति एक राहत का काम करती है।

ईश्वर ने हमारे लिए कितना कुछ बनाया है! अपने दायरों से बाहर निकले तो दुनिया बहुत लुभावनी लगती है। जिसमें हम छोटे हो जाते हैं। बाकी सब बहुत विस्तृत लगने लगता है। हमारे मन हमारी आत्मा को अपने में समेट लेता है।

अपने नए साथियों के साथ पहला दिन बहुत अच्छा रहा। लौटते समय हमने बाहर ही खाना खाया। वो भारतीय खाना बहुत चाव से खा रही थी। उनको खाने से जुड़ी जानकारी जब मैंने दी तो वो बहुत खुश हुईं।

हम भारतीय अपने देश को कितना घूम पाते हैं पता नहीं? पर ये विदेशी पर्यटक हमारे देश के बारे में कई जानकारियों के साथ, बिना हिंदी जाने बड़े आराम से यहाँ का आनंद लेते है। संस्कृति, सभ्यता से जुड़ी इनकी जिज्ञासा मुझे लुभा गई।

लद्दाख की कईं जगह घूमने के बाद हम बहुत थक गए थे। कल मुझे अकेले ही पागोंग झील देखने जाना है। रात को वहीं टेंट में रुकने का इंतजाम होटल की ओर से होगा। अगले दिन में नुब्रा वेली को देखती हुई वापस आऊँगी।

पाँच घण्टे के रास्ते को तय करके हम पागोंग झील तक पहुँचे। दूर पर्वतों के बीच में से जब उस झील की एक झलक दिख रही थी तो वो मुझ पर कैसा जादू कर रही थी। कैसे बताऊँ?

पर्वतों ने अपनी गोद में किसी प्यारे बच्चे की तरह उस झील को सम्हाल कर रखा है। मुझे तो कुछ ऐसा ही लग रहा था। झील भी एक मासूम, शांत बच्चे की तरह अपने सात रंगों के साथ अपनी मस्ती में गुनगुना रही थी।

पंच तत्व से बना हमारा जिस्म में पानी का प्रतिशत सबसे ज्यादा होता है। शायद इसीलिए कईं लोगों को पानी बहुत मोहित करता है।

इंसान के जीवन की शुरूआत माँ के गर्भ के खारे पानी से ही तो होती है। गर्भ से लेकर सागर तक का पानी एक सा ही तो है। माँ के गर्भ से निकल कर हम दुनिया के गर्भ में बढ़ते हैं।

बहुत ठंडी बर्फीली हवा, झील का किनारा, पर्वतों के दायरे—इससे ज्यादा प्रकृति

हमें क्या दे सकती है। ये नजारा मेरी आँखों से अब कभी हट नही पायेगा। जिसनें इस दुनिया को, हमको बनाया है उसे याद करके आँखों में आँसू आ गए।

एक धन्यवाद, एक शुक्रिया! कितना दिया है तुमने? क्या हम इसे समझ पाये? अपनी शिकायतों के आगे कुछ देख पाये? मुझे आज इस जगत का रचयिता बहुत भोला, मासूम लगा।

वो कैसे इतना कुछ देकर भी हमारी शिकायतें सुनता है? कभी कहता नहीं कि जरा, एक नजर उस ओर तो करो जहाँ तुम खत्म होते हो! तुमसे आगे, तुम्हारे दर्द के आगे भी एक दुनिया है!

यहाँ सबके आँचल में कोई न कोई दाग तो है ही। इसका मतलब यह कतई नही है कि ईश्वर ने हमारा साथ या हाथ छोड़ दिया है। हर कमी के बावजूद वो हमारे साथ है। पूर्णता की ओर का यह रास्ता हम उसकी उँगली थामकर तय कर सकते हैं।

रचनाकार कभी भी अपनी रचना को भूलता नहीं है। जैसे ही हम उसकी ओर हाथ बढ़ाते हैं वो हमें थाम लेता है। सिर्फ पहला कदम हमें आगे बढ़ाना पड़ता है उसके आगे...।

झील के किनारे रात का समय, आसमान में सितारे, एक इंसान को कवि, लेखक, दार्शनिक क्या नहीं बना सकता है? आज ऐसा लग रहा था कि ये रात यहीं ठहर जाये। कुछ पल जीवन को कितना जीवंत कर सकते हैं यह मैंने आज जाना।

रात की गहराई के साथ ठंड इतनी बढ़ गई थी कि मुझे अपने टेंट में जाना पड़ा। अपनी खिड़की से आसमान को देखते-देखते कब आँख लग गई, पता नहीं! सुबह जब आँख खुली तो मंद, ठंडी हवा हौले से मेरे पास आई मुझे जगाने के लिए।

नुब्रा वेली को देखते हुए मैं अपने होटल में आ गई। मेरा मन थोड़ा उदास था। प्रकृति से दूरी कभी-कभी मुझे बहुत बेचैन कर देती है। वो जगह मेरे मन से हटती ही नहीं। एक अजीब-सा खाली पन मेरे अंदर भर गया।

बचपन में एक बार परिवार के साथ ऋषिकेश गई थी। तब भी वहाँ से निकलते समय मेरा मन बहुत उदास था। तब प्रकृति से बात करने जितनी समझ नहीं थी। पर उस आकर्षण को भूलना मेरे लिये बहुत मुश्किल रहा था।

यहाँ से लौटना आसान नहीं था। गाड़ी में बैठते हुए भी लगा कुछ देर और ठहर

जाऊँ। जीवन आगे बढ़ने का नाम है। इस मन की तिजोरी भी बड़ी अजीब है। कितना भी सौंदर्य भर दो, और माँगती है। इसका मन भरता ही नहीं!

अगले दिनों में हॉल ऑफ फेम, कुछ गोम्पा (जहाँ बौद्ध भिक्षु रहते हैं) देखे। संगम, नदी जो मुझे ऊपर हवाई जहाज से बहुत महीन सुंदर दिख रही थी को समीप से देखा।

एक तरफ से सिंधु और दूसरी ओर से जांस्कर नदी जहाँ मिलती है उसे संगम कहते हैं। दो नदियाँ मिलने से संगम का पाट चौड़ा हो जाता है। नदी का वेग भी बढ़ जाता है। मैंने पानी को छुआ, वो बहुत ठंडा था। हरे रंग के काँच जैसा पानी बहुत अच्छा लग रहा था।

यहाँ अपनी मस्ती में झूमती बहती नदी सुंदर लग रही थी। नदी ही तो हमें सिखाती है, बहते रहना, जो साथ रखने लायक नहीं है उसे किनारों पर छोड़ते हुए आगे बढ़ने का नाम ही जीवन है!

आज की रात मेरी लद्दाख में आखिरी रात है। कल सुबह अपने शहर, घर वापस जाना है। इन सात दिनों की यादें तो इतनी हैं कि मैं रोली को न जाने कितने दिनों तक यह सब बताती रहूँगी या खुद से बातें करती रहूँगी।

सुबह सात बजे मेरी फ्लाइट है। आज रात भर मुझे नींद नहीं आई। लद्दाख का शांतिमय जीवन मुझे रास आ गया था।

कल जाना है यह सोच कर मन बहुत उदास था। एक रोली ही थी जिसकी याद मुझे वापस ले जा रही थी। नहीं तो मन कह रहा था यहीं कहीं अपना कोई काम तलाश कर रुक जाओ। उस भीड़ में उस घर में वापस जाने का मन नहीं हो रहा था।

शांति के स्वाद के बाद जीवन का हर स्वाद मुझे फीका लग रहा था। मैंने अपना फोन उठाया तो देखा उसमें बहुत से लोगों के मैसेज थे। वह सब तो अब घर जाकर ही देख पाऊंगी। अभी पढ़ने का मन नहीं था।

हाँ, रोली और देव के मैसेज थे। पहले रोली के मैसेज देखे। वह घर वापस आ गई है। उसकी इंटर्नशिप की अवधि बहुत अच्छी रही। अब उसे मेरा इंतजार है। मेरे बिना उसे घर बहुत सुना-सुना लग रहा है। आज उसने खाना भी नहीं खाया, उसे

मेरी बहुत याद आ रही है।

उसे मुझसे बहुत सारी बातें करनी है। अरे यह सब पढ़ते-पढ़ते मुझे भी लगा कि जल्दी पहुंच जाऊं। रोली को अच्छे से खाना खिला दूँ। कितने दिनों से मैंने उसे खाना नहीं दिया। वह हमेशा कहती थी 'तुम्हारे हाथ के खाने के अलावा मुझे किसी के हाथ का खाना नहीं भाता है।'

मैं हंसकर उससे कहती 'तेरे पापा और दादी ने सुन लिया तो कहेंगे तेरा भी दिमाग मेरी तरह खराब हो गया है।'

'उन्हें जो कहना है कहें पर मेरे लिए तो यही सच है।'

रोली के संदेशों ने जाने का उत्साह भर दिया। मन अभी तक बेजान-सा पड़ा सिसक रहा था। अब देव के संदेश देखे 'कैसी हो? कैसा लग रहा है? ऐसे ही कई छोटे-छोटे मैसेज। देव को मैंने जवाब दिया—सब कुछ अच्छा रहा! पर आज थोड़ा मन उदास था। जाने की इच्छा ही नहीं हो रही थी। जब रोली के मैसेज देखे तो घर की याद आने लगी।

देव का जवाब आया—'जब चाहो मेरे पास आ सकती हो! उधमपुर बहुत सुंदर जगह है।'

जवाब पढ़ कर सोचा कि देव भी अभी तक जागे हैं। एक बार फोन लगा कर देखती हूँ। शायद लाइन मिल जाए। इतने में फोन बज उठा। एक मुस्कुराहट से मैंने फोन उठाया।

देव ने कहा—'सरोज, क्यों परेशान हो रही हो? तुमको लोगों से मिलकर अच्छा लगेगा। बहुत लोग तुम्हारा इंतजार कर रहे होंगे। तुम दोनों जब चाहो मेरे पास आ सकते हो।'

देव ने तो एक सांस में सब कह दिया पर मैंने वह सारे फर्क महसूस कर लिए जो आज से पहले हमारे बीच में थे। औपचारिकता की हर दीवार गिर गई थी। उसे समझ कर मैंने भी अपना कदम आगे बढ़ाया।

'रोली से जुड़ी जिम्मेदारी के बाद मैं ऐसी ही किसी जगह रहना पसंद करूंगी। यह यात्रा मुझे रास आ गई। मेरे जीवन के उद्देश्य भी साफ हो गए। कहते-कहते आवाज भारी हो गई।'

'अब क्या सोचने लगी?' देव ने मेरी बात को रोककर पूछा। शायद वो दर्द की आवाज सुन रहा था।

'कुछ नहीं देव, जीवन ने मुझे बहुत दे दिया। जो मांगने का तो दूर सोचने का भी हक नहीं रखती थी। वह सब मिल गया। मेरा आंचल खुशी, सम्मान और तृप्ति से भर गया है।'

'तुममें लगन और हुनर दोनों हैं। यह सब तो मिलना ही था। कब मिलेगा, यह कोई नहीं जानता है। अब तुम्हारी व्यस्तता बहुत बढ़ जाएगी। चिंता मत करो। बहुत लोग तुम्हारा इंतजार कर रहे होंगे।'

'हाँ देव, पर हमारा यह रिश्ता!'

'इतना मत सोचो! दोस्ती से खूबसूरत रिश्ता कोई भी नहीं है। आज जो एहसास मिला है उसे किसी किंतु परंतु में मत उलझाओ। इसे यूँ ही रहने दो। माँ पापा को तुम्हारे बारे में सब पता है। तुम उनसे मिलोगी तो उनको बहुत अच्छा लगेगा।'

'अरे वाह, यह तो तुमने बहुत अच्छा किया देव! उनसे मिलकर तो मुझे भी बहुत अच्छा लगेगा। मैं उनसे मिलने जरूर जाऊंगी!'

'रोली को भी ले जाना! उसे पापा से मिलकर अच्छा लगेगा। उन्हें बेटियां बहुत प्यारी हैं। कहते-कहते अचानक देव ने कहा—'तुम्हारी फ्लाइट का समय क्या है?'

'अरे समय तो हो गया है!' मैंने समय देखा फ्लाइट में दो ही घंटे बाकी हैं।

'तुम आराम से जाओ। हम फिर बात करते हैं।'

फोन बंद करके कमरे में नजर दौड़ाई। सामान तो पहले ही समेट कर रख दिया था। बस मन को समेटने में मुश्किल हो रही थी।

देव से बात करने के बाद वह भी आसान लगने लगा। कमरे में होटल के फोन की घंटी बजी। फोन उठाया तो रिसेप्शन से आवाज आई—'गुड मॉर्निंग मैडम, आपकी टैक्सी तैयार है।'

'गुड मॉर्निंग दो मिनट में नीचे आती हूँ!' कहकर मैंने फोन रखा और कोट पहन कर सामान उठाकर कमरे से बाहर निकली।

एक रूम बॉय बाहर खड़ा था मेरा सामान लेने के लिए। उसके अभिवादन का जवाब दिया। एक छोटी सी लगैज के लिए किसी को क्या परेशान करना? उसने जिद की तो मुस्कुराते हुए मैंने अपना सामान उसे दिया। गाड़ी में सामान रखने के बाद उसे कुछ देना चाहा तो उसने लेने से मना कर दिया। बहुत मनाने के बाद उसने

लिया।

गाड़ी में बैठकर अपने सुंदर होटल को आखिरी बार देखा। रास्ते में पर्वतों को निहारती रही।

एयरपोर्ट पहुंच औपचारिकता पूरी करने के बाद आराम से कुर्सी पर बैठे हुए उगते सूरज को देखना बहुत अच्छा लग रहा था।

विमान में बैठने की घोषणा हुई। इस बार भी मुझे खिड़की वाली सीट मिली। विमान ऊपर उठा, मैंने एक बार फिर यहाँ के सौंदर्य को जी भर कर देखा।

पर्वत, नदी, विहार सबसे विदा ली। जैसे ही यह सब मेरी निगाहों से दूर हुए मैंने अपनी आंखें बंद कर लीं। कब आंख लग गईं, पता ही नहीं चला।

एयरहोस्टेस ने मुझे छूकर जगाया 'हम लैंड करने वाले हैं! आप सीधे बैठ जाएं।'

विमान ने भी अपने पहिये जमीन पर लगाये। मैंने भी अपने आपको बाहर कदम रखने के लिए तैयार किया। एक उत्साह के साथ मुझे भी बाहर निकलने की जल्दी होने लगी।

एयरपोर्ट से बाहर निकल कर सोचा, टैक्सी ले लेती हूँ। इतने में देखा रोली हाथ हिला कर मुझे बुला रही है। मेरे कदमों की गति तेज हो गई। मैं रोली के पास गई और उसे अपनी बाहों में ले लिया।

एक गहरा आलिंगन, जिसके बाद कहने सुनने को कुछ भी नहीं होता है। हम दोनों के जीवन की बहुत बड़ी ऊर्जा रहा है। रोली ने मेरा सामान अपने हाथ में लिया। मेरा एक हाथ थामा और हम बातें करते हुए आगे बढ़ने लगे।

रोली को देख कर मन बहुत प्रसन्न था। वह बताने लगी—'घर में कितने लोग मुझसे मिलने आए। कितने उपहार आए हैं! साथ ही कितने लोग हैं जो अपने शो में मुझे लेना चाहते हैं। मुझे जज बनाना चाहते हैं।'

अचानक मेरे मन में एक एहसास आया। आनंद की एक लहर मेरे मन में उठी। कितना मिला है मुझे? एक ऐसी लहर, एक ऐसा एहसास जो जीवन के सुख दुख से ऊपर है।

एक बार जिसने इस आनंद को पी लिया उसके जीवन का हर पल सुंदर ही होगा। सुख मिले तो खुश, दुख में भी खुश! यही तो जीवन है।

दिन और रात की तरह उनसे घबराना कैसा? ये एयरपोर्ट मेरे जाते समय भी

जगमगा रहा था। आज भी वैसा ही जगमगा रहा है। इसे आने-जाने से तो क्या, आप किस लिए कहाँ जा रहे हो, किसी से कोई फर्क नहीं पड़ता है।

हमारा मन भी ऐसा हो जाये तो हमने सब कुछ पा लिया। मैं रोली का हाथ थामें चल रही थी। एक ऐसा रंग मुझे भीगो गया जिसकी रंगत उतर नहीं सकती है।

ये रंग सबको मिले! बस जीवन में पहला कदम उठाने का साहस जगाना होता है। जिसने इसे जगा लिया वो रोशनी में समा जाता है। अंधेरे फिर दिखते हैं पर छू नहीं पाते हैं।

अपने से बातें करते मेरी आंखों में पानी आ गया। मन में रॉबर्ट फ्रॉस्ट की कविता की पंक्यिाँ गूंज उठी 'वन बहुत सघन और सुहाना है किंतु मुझे कुछ वचन निभाने है और सोने से पहले मीलों दूर जाना है...